प्र क र ण -- १

ऐ ति हा सि क ना ट क व ए कां कि यों का वि का स

" नाटक साहित्य का सगुण रूप है । जिस प्रकार निराकार ब्रह्म अपने वैभव का अभिज्ञान अवतार के माध्यम से भक्त को कराता है उसी प्रकार साहित्य का सौन्दर्य रंगमंच पर अवतरित होकर नाटक के रूप में प्रकट होता है । "

" विजय पर्व " डा. रामकुमार वर्मा ।

इतिहास और साहित्य

स्वर्गीय प्रेमचन्द के शब्दों में " साहित्य की सच्चा इतिहास है, क्योंकि उसमें अपने देश व काल का जैसा चित्र होता है, वैसा कोरे इतिहास में नहीं हो सकता । घटनाओं की तालिका इतिहास नहीं है, न राजाओं की लड़ाइयों की इतिहास है । इतिहास जीवन के विभिन्न अंगों की प्रगति का नाम है, और जीवन पर साहित्य से अधिक प्रकाश और कौन वस्तु डाल सकती है क्योंकि साहित्य अपने देश काल का प्रतिबिम्ब होता है । [१]

समाज का जितना घनिष्ठ संबंध साहित्य से है उतना ही इतिहास से । समाज की प्रत्येक क्रिया प्रतिक्रिया का साहित्य प्रतिरूप, प्रतिबिम्ब व प्रतिछाया है, जिसका वांछित रूप से विश्लेषण इतिहास में आवश्यक हो जाता है ।

साहित्यकार अपने युग का प्रतिनिधि इस अर्थ में माना जाता है कि वह भूत काल के प्रति श्रद्धायुक्त, वर्तमान के प्रति सतत जागरूक और भविष्य के प्रति पूर्ण आस्थावान रहकर समाज के विकास के क्रम को बनाये रखने में योग देता है । साहित्यकार के इंगित निर्देश प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से मानव जीवन को नई दिशा, नया मोड़ नवीन विचार प्रदान करते, व्यावहारिक क्षेत्र में कर्तव्य करने की प्रेरणा अथवा शक्ति प्रदान करते हैं । किसी युग के प्रतिनिधि कलाकारों की रचना का अध्ययन करके यह ज्ञात हो सकता है कि तत्कालीन समाज और उसके प्रति कलाकार का दृष्टिकोण क्या था ? परन्तु क्यों था यह बताना इतिहास का कार्य है ? [२]

• साहित्य वर्तमान को सामने रखकर भविष्य की रूपरेखा का निर्माण करता है, इसके विपरीत भूतकालीन घटनाओं, उनके कारण, कालगत प्रवृत्तियों के आकलन तथा उनके

---

१. कुछ विचार -- प्रेमचन्द - पृष्ठ संख्या १४७

२. साहित्य चिन्तन -- नरेशचन्द्र चतुर्वेदी -- पृ. सं. १

सम्यक् विवेचन के द्वारा वर्तमान के लिए ऐसी ज्ञातव्य विवेचना प्रस्तुत करता है, जिसके आलोक में भविष्य के लिए मार्ग खोजने में सहायता मिलती है । जीवन की एक-एक अनुभूति, क्रिया और प्रतिक्रिया साहित्य रूपी माला में मनकों की भांति गुंथी रहती हैं, उस माला के मनकों के द्वारा जब हम कालक्रम से आगे बढ़ते हैं, तब हम साहित्य की उस विधा तक पहुंच जाते हैं जहां साहित्य इतिहास का रूप ग्रहण कर लेता है ।

इतिहास घटनाओं के साथ सत्य परायण रहता है, चाहे वे घटनाएं कैसी ही अधूरी क्यों न हों, उनकी कड़ी कम पक्की हों, उनकी अर्हता कम हो अथवा उनकी प्रतिक्रिया, प्रभाव या फल कैसे भी हों । इतिहास कभी कुकमी नहीं बन सकता । इतिहास की सामग्री नियंत्रण के बाहर की वस्तु है, वह तो जैसे किसी सांचे में जकड़ बन्द या ठप्प बनकर रह जाती है । जैसी सामग्री मिलती है इतिहासज्ञ निष्पक्ष भाव से या बिना लगाव के उसकी जांच करता है । [१]

इस प्रकार आदर्श इतिहासज्ञ वह है जिसके पास अपने अध्येय विषय के तथ्य तथा घटनाओं को परीक्षण करने की वैज्ञानिक योग्यता हो, जिसके पास अतीत को यथावत, प्रतिबिंबित और पुनः प्रस्तुत करने के लिए दर्पण जैसी यांत्रिक सच्चाई और अविकलता है ।

अतीत सभी को मोहक लगता है । मानव समाज की यह विशेषता है कि उसे अपने पूर्व काल को सुनने समझने की आकांक्षा होती है तथा उस इच्छा की पूर्ति इतिहास द्वारा ही होती है । मानव मन की यह भी विशेषता है कि वह जीवन की गहराई तक जाकर उसके संबंध में अधिक से अधिक ज्ञान अर्जित कर अपनी ज्ञान संबंधी तृषा को शान्त करना चाहता है । जहां तक बुद्धि पहुंच सकती है । यथार्थ व कल्पना

---

१. हिन्दू-सभ्यता -- राधा कुमुद मुकर्जी - अनुवादक - वासुदेवशरण अग्रवाल ।

के यान पर चढ़ कर पहुँचता है । परन्तु उसके बाद भी कुछ जानने की इच्छा अथवा अभिलाषा उसके मन में शेष रह जाती है ।

काल का अविराम संचरण जितना नूतन होता है मानव की बुद्धि उतनी ही जिज्ञासु । काल पर अवस्थित मानव के विकास एवं ह्रास की कथा का चित्रण हमें इतिहास द्वारा ही प्राप्त होता है । उन ऐतिहासिक तथ्यों से अपने जिज्ञासुओं की पिपासा शान्त करना इतिहास की सीमा के भीतर है । इतिहास के तथ्यों को परिवर्तित करने की सामर्थ्य किसी भी साहित्यकार को नहीं होती, परन्तु सृजनात्मक साहित्य पर इस प्रकार का अंकुश नहीं होता । इतिहास के लिए वह तथ्य अनिवार्य है, परन्तु तथ्यों का संग्रह इतिहास नहीं । साहित्यिक इतिहास पर भी यही बात लागू होती है ।

वस्तुत: इतिहास की नहीं साहित्य की जीवंत धारा भी समाज से प्रवाहित होती है और समाज की दृष्टि में नव आलोक साहित्य भरता है । समाज अथवा व्यक्ति कोई जड़ पदार्थ नहीं, वे चेतन हैं -- मानव विकास तथा ह्रास के प्रतिनिधि ,गुण अवगुण के पुतले, शक्ति के पुंज: दुर्बलता के प्रतीक ।

जैसे साहित्यिक मूल्यांकन के लिए अन्तश्चेतना तथा सामाजिक भावनाओं का बोध आवश्यक है वैसे ही इतिहास के लिए सामाजिक घटनाएं तथा उसकी प्रवृत्तियां । साहित्य में व्यक्ति और समाज की आत्मा का विकास होता है और इतिहास में उसके शरीर का गठन । संक्षेप में साहित्य व्यक्ति और समाज की चेतना को प्रतिबिम्बित करता है तथा इतिहास उसकी बाह्य सीमाओं, तत्संबंधी घटनाओं तथा तथ्यों का आकलन और विश्लेषण करता है ।

शुद्ध राजनैतिक या तिथिक्रम के क्रम में सजाये हुए इतिहास का, जो विशेष रूप से तारीखी घटनाओं के वर्णन तक ही सीमित हो, उसका कभी इतना अधिक महत्व

नहीं हो सकता, क्योंकि जन इतिहास की तुलना में उसका स्वल्प या नगण्य स्थान है । जन इतिहास का सम्बन्ध शासक राज्य प्रणाली और शासन विधि से उतना नहीं होता जितना संस्कृति सभ्यता के विकास से एवं उन रचनात्मक शक्तियों, साधनों एवं आन्दोलनों से होता है जो उस विकास को क्रम देती हैं ।

इतिहास में घटनाओं की प्राय: पुनरावृत्ति होते देखी जाती है ।[१] इसका तात्पर्य यह नहीं होता कि उसमें किसी नवीन घटना का प्रादुर्भाव नहीं होता, किन्तु असाधारण नवीन घटना भी भविष्यत में फिर होने की आशा रखती है । मानव, समाज की कल्पना शक्ति का अक्षय भण्डार है । क्योंकि इच्छा शक्ति का विकास उसी के माध्यम से होता है । इन कल्पनाओं व इच्छाओं का मूलसूत्र अत्यन्त सूक्ष्म तथा अपरिस्फुट होता है । जब वह इच्छा शक्ति किसी व्यक्ति या जाति में केन्द्रित होकर अपना सफल या विकसित क्रम आरम्भ करती है तभी इतिहास की सृष्टि होती है । विश्व में जब तक कल्पना, जब तक उच्चता को प्राप्त नहीं होती तब तक वह क्रम परिवर्तित करती हुई पुनरावृत्ति करती ही जाती है । समाज की अभिलाषा अनंत स्त्रोत वाली है । पूर्व कल्पना के होते हुए एक नवीन कल्पना इसका विरोध करने लगती है और पूर्व कल्पना कुछ काल के लिए ठहर कर फिर होने के लिए अपना क्षेत्र प्रस्तुत करती है । उधर इतिहास का नवीन अध्याय खुलने लगता है । मानव समाज के इतिहास का इसी प्रकार संकलन होता है ।

स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों को अभिव्यक्ति देने के लिए प्राचीन इतिहास कलाकारों को अत्यन्त आकर्षक होता है । वर्तमान से दूर जाकर प्राचीन के अनुकूल वातावरण का निर्माण करते हुए ,तत्कालीन परिस्थितियों की रेखाओं को उभार कर अपनी कथावस्तु के चयनमें कलाकार पारंगत होता है।

---

१. अंग्रेजी में भी कहावत है — History repeats itself.

रोमांटिक कलाकार ऐतिहासिक घटनाओं के साथ कल्पना के आश्रय से ऐसे पात्रों को व इस प्रकार की स्थितियों का प्रस्तुतीकरण करता है कि इतिहास की एक सीमा तक रक्षा करते हुए, अनैतिहासिक पात्रों और घटनाओं द्वारा आधिकारिक कथा-वस्तु को विकसित तथा प्रेम शौर्य व करुणा जनक परिस्थितियों के चित्रण द्वारा पात्रों की मानसिक अवस्थाओं का विकास तथा विश्लेषण कर सके । १

इतिहास, गत घटनाओं का यथा तथ्य आकलन है । ये घटनाएं देश, धर्म, समाज आदि किसी भी क्षेत्र की हो सकती हैं । किन्तु राजनैतिक घटनाएं ही देश समाज, व एक सीमा तक धर्म के रूप को भी परिवर्तित कर देती हैं । इसी लिए इतिहास को राजनैतिक घटनाओं का पर्याय समझा जाने लगा । यही कारण विभिन्न विषयों के युग्म बनाये जायें तो राजनीति व इतिहास एक युग्म होगा । गत घटनाओं के कहने का तात्पर्य यही है कि इतिहास घटनाओं के बाद ही जन्म लेता है । साथ ही वर्तमान की संकुलता से छंट-छंट कर घटनाएं अतीत के विधान में अपना स्थान निश्चित कर लेती हैं । यह निश्चय उनकी विशेषता महत्ता एवं उपयोगिता के संदर्भ में होता है ।

घटना चक्र में वे घटनाएं विशेष व महत्वपूर्ण समझी जाती हैं जो समाज या देश की गति विधि में युगान्तकारी परिवर्तन उपस्थित करती है । अथवा उसमें योग देती हैं । अन्य घटनाएं जो सामान्यतः इस गतिविधि में लीन हो जाती हैं । इतिहासकार की दृष्टि से सामान्य होने के कारण उल्लेखनीय नहीं होती, उनको छोड़ता हुआ वह आगे बढ़ जाता है । उसकी दृष्टि कारण, कार्य कारण के चक्र पर रहती है । एक घटना घटित होने के पूर्व उसके अविर्भाव के निश्चित कारण होते हैं जिनको हम पूर्व घटना कह सकते हैं, क्योंकि इन कारणों से जो घटना घटित होती है,

---

१. प्रसाद की नाट्य कला -- राम देवक पाण्डेय - पृ.सं. ६२

वह स्वयं आने वाली घटना का कारण बन जाती है और इस प्रकार कारण कार्य कारण का यह चक्र चलने लगता है ।

इतिहासकार घटनाओं को यथा तथ्य रूप में अभिव्यक्त करता है । उसका उद्देश्य अथवा कार्य उपदेश देना, अथवा भविष्य के लिए समाज को सावधान नहीं होता न वह इतिहास में ऐसे स्थलों की योजना ही करता है जिनके अन्तर्गत उपदेश दिये जा सकें तथा समाज एवं राष्ट्र को भविष्य के लिए सावधान किया जा सके । तथापि इतिहास की घटनाओं के आकलन का यदि कोई समाज सुधारक अथवा राजनीतिक नेता इस रूप में प्रयोग करना चाहता है तो इतिहासकार को कोई आपत्ति नहीं हो सकती । इतिहास अपनी पुनरावृत्ति करता है, इस कथन का संकेत इसी प्रयोग की ओर है । जिस देश का इतिहास उसके गर्व की वस्तु रहा है वह उससे लाभ उठा सकता है ।

साहित्य का रूप निर्धारित करते हुए विभिन्न आचार्यों ने विभिन्न मत प्रकट किए हैं, जिनमें भावों की वह अभिव्यक्ति साहित्यकार करता है, वे उसके अपने भाव होते हैं अथवा उनकी वह अनुभूति करता है, अथवा उसके भावों का स्वरूप वही होता है जो लोक मानस में व्याप्त होता है । इसी तथ्य में शब्द परिवर्तन द्वारा इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है कि साहित्य जीवन की समस्त अभिव्यक्ति है । साहित्य शब्द की मूल भावना भी " स + हित " व्याख्या में निहित है ।

इस स्थल पर साहित्य के अपेक्षित तत्वों पर विचार किया जा सकता है । इनमें प्रमुख है सामाजिक राजनैतिक या धार्मिक घटनाएं हैं जो अपनी विशेषता या महत्ता के कारण, समाज धर्म व राजनीति का अंग बन गई हैं । गौण रूप से ये इतिहास का कलेवर हैं । व इनकी सत्यता इतिहास का प्राण है । साहित्य के लिए यह प्रेरणा स्त्रोत हैं, वे पृष्ठ भूमि हैं जिन पर साहित्य के भव्य भवन का निर्माण होता है ।

घटनाओं को हम दो रूप में विभाजित कर सकते हैं । १) प्रिय घटनाएं २) अप्रिय घटनाएं । प्रिय घटनाएं हमारी मान्यताओं एवं आदर्शों के अनुकूल हमारी विजय व हमारे पराक्रम को प्रकट करती हैं । एवं इसी कारण वह प्रिय कहलाती हैं । अप्रिय घटनाओं के अन्तर्गत हमारी पराजय व पराभव के चित्र होते हैं । साहित्यिक शब्दावली में इन विभागों को आदर्श एवं यथार्थ के नाम से सम्बोधित कर सकते हैं ।

प्रिय एवं अप्रिय दोनों घटनाओं का एक समान बिना किसी भेद भाव के इतिहासकार समादर करता है जबकि साहित्यकार आदर्श की ओर उन्मुख रहता है । यथार्थ को चित्रित करते हुए भी साहित्यकार की दृष्टि समाज के हित साधन की ओर रहती हैं । वह यथार्थ को इस प्रकार अभिव्यक्ति करता है कि पाठक अथवा सामाजिक उसके उन चित्रों से प्रभावित होकर समाज से उस अप्रियता को दूर करने के लिए उद्यत हो जाएं ।

साहित्यकार व इतिहासकार बुद्धितत्व का प्रयोग दो भिन्न रूपों में करते हैं । साहित्यकार बुद्धितत्व का प्रयोग करते हुए यह देखना चाहता है कि वह जिस कथा वस्तु को अपने काव्य का आधार बना रहा है । वह कहां तक बुद्धि संगत है, इसके विपरीत इतिहासकार को बुद्धि का प्रयोग तथ्यातथ्य के निराकरण में होता है ।

भावतत्व के लिए इतिहास में कोई स्थान नहीं होता । इतिहासकार घटना चक्र की सकारणता के अन्तर्गत भावतत्व के लिए आधार प्राप्त करके भी पात्रों की भावुकता का वर्णन अपने क्षेत्र के बाहर की वस्तु समझता है, जबकि साहित्यकार की कृतिका मूल आधार भावभूमि होता है । इस लिए इन भावों की अभिव्यक्ति काव्य को चिरंतन एवं शाश्वत रूप दे रूप देती है । इतिहास संग्रहणीय एवं उल्लेखनीय है तो काव्य स्मरणीय एवं पुन: पुन: पठनीय । इस प्रकार कल्पना बुद्धि एवं भाव तत्वों में जहां साहित्य तीनों का प्रयोग एवं समन्वय करता है । वहां इतिहास मुख्यत: बुद्धि तत्व पर ही आधारित रहता है । [illegible]

किन्तु इसके पैर इसी भूमि पर रहते हैं तथा इसी में साहित्य व इतिहास का सम्बन्ध निहित है ।

यदि इतिहासकार व साहित्यकार के प्रेरणास्त्रोतों का अवलोकन किया जाय तो दोनों के विषयों का मूलभूत अन्तर स्पष्ट हो जाएगा । तथ्यान्वेषण, मानव व्यापारों में अनुराग तथा आत्माभिव्यक्ति तीन प्रमुख तत्व हैं, जिनको इतिहासकार की प्रेरणा के स्त्रोत कहा जा सकता है, तथा आत्माभिव्यक्ति, मानव व्यापारों में अनुराग, नित्य व काल्पनिक संसार से प्रेम तथा सौन्दर्य प्रियता चार तत्व साहित्यकार की प्रेरणा के आधार कहे जा सकते हैं । इतिहासकार तत्वान्वेषी होता है, तथा सत्य की खोज उसकी सूक्ष्म दृष्टि होती है जिसके फलस्वरूप वह इस क्षेत्र को अपनी रुचि के अनुकूल पाता है । इसके विपरीत साहित्यकार की सूक्ष्म दृष्टि सौन्दर्य प्रियता नित्य एवं कल्पना जगत में अनुराग के अन्तर्गत प्रकट होती है ।

ऐतिहासिक विधा के अन्तर्गत यह स्मरणीय है कि साहित्यकार ऐतिहासिक घटनाओं की मान्यताओं को मानता तथा अनुकूल उनका चित्रण करता है । ऐतिहासिक घटनाओं तथा उपन्यासों के संबंध में यह तथ्य स्वीकृत है । किन्तु उसका यह प्रयास ऐसा होता है कि इतिहास के तथ्य अक्षुण्ण रहते हैं तथा साहित्यकार का कल्पना प्रसूत अंश ऐतिहासिक घटनाओं से सामंजस्य स्थापित कर लेता है । इस प्रकार साहित्यकार उस समस्त चित्र की उद्भावना कर देता है जो कार्य इतिहासकार के लिए सम्भव नहीं होता।

कलाकार के व्यक्तिगत गुण तथा उस पर सामयिक प्रभाव पर विचार करें तो ज्ञात होगा कि इतिहासकार व साहित्यकार दोनों का व्यक्तित्व भिन्न होता है। इतिहासकार को दृढ विवेकशील तथा कठोर कहें तो साहित्यकार को भावुक सहृदय तथा सरल कहना उपयुक्त होगा दोनों के व्यक्तित्व पर समाज तथा राष्ट्र की राजनीतिक परिस्थितियों का समान रूप से प्रभाव पड़ता है किन्तु इतिहासकार उस प्रभाव को

आत्मसात करके उससे आपको दूर रखता है । अपनी कृति को उस प्रभाव से मुक्त रखता है । किन्तु साहित्यकार को ऐसा करना सम्भव नहीं हो पाता ।

इतिहासकार के लिए इतिहास एक कथावस्तु है ही और वह उसकी सकारणता तथा एक सूत्रता को खोजने का प्रयत्न करता है किन्तु साहित्य की प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति लिए इतिहास जैसी सम्पूर्ण कथावस्तु की उपेक्षा नहीं होती । साहित्यकार ऐतिहासिक कथावस्तु के साथ-साथ कल्पित अथवा मिश्र तथा अन्य प्रकार की कथावस्तुओं को भी ग्रहण कर सकता है । उदाहरणार्थ ऐतिहासिक नाटक अथवा उपन्यासों में साहित्यकार छूटे हुए सूत्रों को एक सूत्रता देने के लिए कल्पना का आश्रय लेता ही है ।

पात्र इतिहास में जितने महत्वपूर्ण होते हैं, उतने ही ऐतिहासिक नाटकों, खण्ड काव्य तथा महाकाव्य में । वास्तविक पात्रों के नाम आदि का विवरण ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित होते हुए भी साहित्यकार की भाव भूमि के रंग में रंगा होता है । इसी कारण एक ही पात्र के सम्बन्ध में विभिन्न कलाकारों के चित्रण भिन्न होते हैं । भारतीय इतिहास का प्रसिद्ध पात्र चन्द्रगुप्त विशाखदत्त ,द्विजेन्द्रलाल राय प्रसाद व सेठ गोविन्ददास आदि की कल्पना के कारण विभिन्न रंगों में चित्रित हुआ है ।

कल्पित पात्रों की योजना साहित्यकार करता है और कर सकता है किन्तु इतिहासकार तो ऐसा नहीं कर सकता, इतिहासकार को तो वास्तविक पात्रों की खोज करनी पड़ती है तथा उन्हीं को प्रश्रय देना पड़ता है । साहित्यकार के कल्पित पात्रों के पीछे भौतिक पात्रों का आधार प्राय: रहता है । साहित्य में उच्च,नीच,साधारण असाधारण, सामान्य, असामान्य आदि विशेषणों के अन्तर्गत पात्रों का विभाजन हुआ है । इतिहास में इस प्रकार के शास्त्रीय विवेचन के लिए स्थान नहीं । न ही ऐतिहासिक तथ्यों के आकलन में इस विश्लेषण की आवश्यकता ही पड़ती है । पात्रों

के चरित्र चित्रण में कथोपकथन द्वारा साहित्यकार कौशल की सर्जना करता है किन्तु इतिहासकार की दृष्टि प्रामाणिकता पर रहती है । वह उद्धरणों को इच्छानुसार परिवर्तित भी नहीं कर सकता जबकि साहित्यकार के लिए स्वयं प्रामाणिकता इतनी महत्वपूर्ण नहीं होती ।

साहित्य अंग्रेजी शब्द लिटरेचर तथा संस्कृत शब्द काव्य का पर्यायवाची माना जा सकता है तथा इस दृष्टि से साहित्य के अन्तर्गत इतिहास भी आ जाता है । साहित्य व इतिहास का समन्वय " साहित्य के इतिहास " में हो जाता है । साहित्य के इतिहास का उसी प्रकार आकलन होता है जिस प्रकार इतिहास का , अत: जिस विधा व सिद्धान्त का पालन इतिहास लिखते समय किया जाता है उसी सिद्धान्त व विधा का पालन साहित्य का इतिहास लिखते हुए करना आवश्यक होता है ।

इतिहास का अनुशीलन किसी भी जाति को अपना आदर्श संगठित करने में सहायक होता है । हमारी गिरी हुई दशा को उठाने के लिए हमारे जलवायु के अनुकूल जो हमारी अतीत सभ्यता है उससे बढ़कर और कोई आदर्श हमारे अनुकूल होगा इसमें सन्देह है । इस प्रकार साहित्य का इतिहास का घनिष्ठ सम्बन्ध है । इस सम्बन्ध में संक्षेप में इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है " इतिहास अतीत की अतीतता है तो साहित्य इतिहास की ऐतिहासिकता ।

१.२ इतिहास व नाटक :--

नाट्य सिद्धान्त के प्राचीनतम ग्रन्थ नाट्य शास्त्र में परिरक्षित भारतीय परम्परा नाटक की दैवी उत्पत्ति व ईश्वरीय देवों से उसके घनिष्ठ सम्बन्ध का प्रतिपादन करती है । परन्तु मानव एक कल्पनाशील प्राणी है । जब उसकी रचना शक्ति व्यक्ति या जाति में केन्द्रीभूत होकर अपना विकसित रूप धारण करती है तभी इतिहास की सृष्टि होती है । विश्व में इसी प्रकार की कल्पनाशील प्रतिभाएं नवीन आवरणों में नवीन घटनाओं की पुनराप्राप्ति करती हैं जो हमारे समक्ष इतिहास के आवरण में प्रस्तुत होती हैं ।

ऐतिहासिक नाटकों का अभिप्राय उन नाटकों से है जिनमें इतिहास व नाटकीय तत्वों का संतुलित रूप में नियोजन व संगठन होता है । नाटक काव्य की वह विधा है जिसमें भारतीय काव्य शास्त्र के अनुसार रस निष्पत्ति उसका चरम लक्ष्य होता है । पाश्चात्य समीक्षा शास्त्र के अनुसार नाट्य साहित्य में चरित्र चित्रण, पात्रों की विभिन्न मानसिक स्थितियों का उद्घाटन तथा विश्लेषण प्रमुख कार्य माना जाता है । अन्तर्द्वन्द्व के चित्रण द्वारा कथावस्तु गतिशील होती है । सर्व प्रथम ग्रीक विचारक अरस्तु ने कथावस्तु को नाटक का प्रमुख तत्व माना था, परन्तु आज के समुन्नत तथा विकसित नाट्य शास्त्र में पाश्चात्य समीक्षकों ने चरित्र चित्रण को प्रमुखता दी है ।

इतिहास व नाटक की सीमाओं को स्वीकार करते हुए ऐतिहासिक नाटककार प्राचीन कथानक को इस प्रकार प्रस्तुत करता है कि प्राचीन वातावरण तत्कालीन राजनैतिक परिप्रेक्ष्य में सजीव हो उठे तथा साथ ही नाटकीय तत्वों का रस सिद्धि और चरित्र चित्रण का समन्वित नियोजन हो सके । अतीत की घटनाओं को उसी रूप में प्रस्तुत करने के कारण नाटककार को इतिहास का बन्धन स्वीकार करना पड़ता है, परन्तु वह प्राचीन घटनाओं का तिथिक्रम के अनुसार विवरण प्रस्तुत नहीं करता ।इति-

कास की आत्मा को सुरक्षित करते हुए अपनी सृजनात्मक प्रतिभा के द्वारा वह नाट्य सृष्टि करता है जिसमें चरित्रों के विकास तथा समन्वित प्रभाव उत्पन्न करने पर उसका ध्यान केन्द्रित रहता है चरित्रों को वह स्वयं व्यक्तित्व प्रदान करता है जिससे उनमें सजीवता व शक्ति आ जाये । नाटककार नाट्य चित्र की रेखाएं तो इतिहास से लेता है, परन्तु उसमें रंग व सौन्दर्य अपनी कल्पना व रचनात्मक प्रतिभा द्वारा लाता है ।

ऐतिहासिक नाटकों में यथा सम्भव इतिहास की रक्षा का प्रयत्न किया जाता है - साथ ही स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति के अनुकूल उनमें कल्पना के योग से काव्यात्मकता का भी सन्निवेश किया जाता है । ऐतिहासिक कथानक को नाटक के सांचे में ढालने में कितनी ही सावधानी का निर्वाह किया जाय, कथानक की अन्विति तथा नाटकीय विकास में बाधा पड़ने की संभावना रहती है । यह स्वच्छन्दतावादी नाटककारों की कृतियों में और अधिक हो जाती है । आधुनिक नाटककार तो कभी कभी केवल ऐतिहासिक पात्रों का नाम ही सुरक्षित रखते हैं शेष सब अपनी कल्पना से कृति को सर्वथा नवीन रूप दे देते हैं । उदाहरणार्थ मोहन राकेश के बहुचर्चित नाटक " आषाढ़ का एक दिन में केवल कालिदास व विलोमतमा के नाम को सुरक्षित रखते हुए शेष कल्पना का प्रयोग किया गया है । कालिदास व विलोमतमा का यह रूप इतिहास से भिन्न सर्वथा नवीन रूप है ।

सफल ऐतिहासिक नाटककार ऐतिहासिक घटना क्रम का ढांचा स्वीकार करते हुए अपने पात्रों को सजीव व व्यक्तित्व सम्पन्न बनाने का प्रयत्न करता है । नाटकीय पात्रों में यह व्यक्तित्व स्थापन या चरित्र निरूपण का यह प्रयत्न हिन्दी नाटकों के विकास की एक ऐसी कड़ी है जो हिन्दी ऐतिहासिक नाटककारों का एक विशिष्ट स्थान निर्धारित करती है । ऐसे नाटककारों के सभी पात्र अपना स्थान साहित्य में अमर बना लेते हैं । रस सिद्धि व पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व के प्रकाशन पर ध्यान रखने के कारण हिन्दी

ऐतिहासिक नाट्य साहित्य विशेष सम्पन्न माना जाता है ।

ऐतिहासिक नाटकों की वस्तु संबंधी गरिमा नाटककार की देन होती है । जो इतिहास की मानव निर्मित संस्थाओं, उनके सामूहिक उद्योगों, मनोवृत्तियों और रहन सहन की पद्धतियों को एक साथ देखना चाहते हैं वे मनुष्यों की सारी प्रवृत्तियों का केन्द्र सम-सामयिक दर्शन को मानते हैं । इस प्रकार मानव जीवन की अंतर्प्रेरणा दर्शन को और बहिर्विकास इतिहास को मानकर दोनों का घनिष्ठ संबंध स्थापित कर देते हैं । मेरी मौलिक घटनाओं का इतिहास या कोरा पारमार्थिक दर्शन उनके लिए महत्त्व नहीं रखता ।

आलोचक प्रवर बाबू गुलाबराय जी के अनुसार ऐतिहासिक नाटक उन्हीं नाटकों को कहते हैं " जिन नाटकों ने देश की राजनीति और उत्थान पतन में भाग लिया हो ।[१] इस परिभाषा के अनुसार ऐतिहासिक नाटकों का क्षेत्र बहुत विस्तृत हो जाता है इसके साथ ही ऐसी कई कृतियां ऐतिहासिक नाटकों के क्षेत्र में आ जाती हैं जिन्हें अन्य आलोचक पौराणिक कहते हैं । परन्तु भारतीय इतिहास के निर्माण में पुराणों की महत्ता को भी स्वीकार किया गया है । अत: ये भी इतिहास की सीमा के अंतर्गत ही स्वीकार किये जाते हैं । महा-भारत, छान्दोग्य, उपनिषद आदि प्राचीन ग्रन्थों में हमारा इतिहास अस्त-व्यस्त रूप में बिखरा पड़ा है ।

देवर्षि सनाढ्य भी उपर्युक्त मत को मानते हैं तथा पुराणों को इतिहास का आधार मानते हुए लिखते हैं, यह ठीक है कि आज पौराणिक व्यक्ति तथा कथाएं इस रूप में प्राप्त होती हैं कि उन पर विश्वास करना ही कठिन है, उन्हें इतिहास मानना तो अलग रहा, परन्तु फिर भी उन्हें प्रागइतिहास ऐसा इतिहास जिनमें तथ्य खोजने की परम आवश्यकता है तो मानना ही पड़ेगा ।" [२]

---

१. सेठ गोविन्ददास नाट्य कला तथा कृतियां - डा. रामचरण महेन्द्र - पृ. सं. ३१

२. " " " " " ३२

ऐतिहासिक नाटकों के सम्बन्ध में सेठ गोविन्ददास का मत है कि " नाटक उपन्यास, कहानी लेखकों को यह अधिकार नहीं है कि वे किसी पुरानी कथा को तोड़ मरोड़ कर एक नई कथा बना दें, जो कथा का अर्थ वे अपने मतानुसार बदल सकते हैं।" १

ऐतिहासिक व पौराणिक नाटक के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने कथानक दृश्य विधान में प्रस्तुत वातावरण तथा भाषा की दृष्टि से ऐतिहासिक या पौराणिक हो। कथानक के लिए यह आवश्यक नहीं कि वह किसी सत्य ऐतिहासिक घटना पर ही आधारित हो, किन्तु यह आवश्यक है कि वह जिस युग का है, उस युग के रहन सहन मनोभावों, जीवन संस्कारों आदि की विशेषताएं उसमें मुखरित हों। पर नाटककार को यह अधिकार न होना चाहिए कि वह मान्य ऐतिहासिक पात्रों के इतिहास प्रसिद्ध रूप के विपरीत उनका चित्र प्रस्तुत करें। उदाहरणार्थ " आषाढ़ का एक दिन " नामक रचना जिसका पूर्व उल्लेख की जा चुका है कालीदास का प्रेरणा स्रोत एक ग्रामीण कन्या को चित्रित किया गया है। जबकि इतिहास विद्योत्तमा को ही उनके ज्ञानार्जन तथा साहित्य सृजन का प्रेरणा स्रोत मानता है।

कुछ ऐसे नाटक होते हैं जो केवल ऐतिहासिक वातावरण की दृष्टि से ही ऐतिहासिक कहे जाते हैं। किन्तु हिन्दी साहित्य की सृष्टि प्रथम कोटी के ऐतिहासिक नाटकों में ही की है। उनके कथानक व पात्र अधिकतर इतिहास प्रसिद्ध ही हैं। लेखक ने उन्हें अपनी सत्यता में उनके समकालीन जीवन को मूर्तिमान कर इस रूप में प्रस्तुत कर दिया है कि उनके जीवन का इतिहास -- सत्य घटनाओं के साथ साथ तत्कालीन जन जीवन भी सजीव हो उठे। ऐतिहासिक नाटकों में कल्पना की यही उपदेयता है। वह उसके आधार पर कथा तथा पात्रों के चरित्र से अपने अभीष्ट उद्देश्य की व्यंजना को अपनी

---

१. सेठ गोविन्ददास नाट्य कला तथा कृतियां -- डा. रामचरण महेन्द्र --- पृ. सं ३३

मार्मिकता और संवेदनीयता तथा व्यापकता प्रदान कर देता है । परन्तु ऐतिहासिक नाटकों में कल्पना का योग इतना नहीं होना चाहिए कि उससे इतिहास विभूत हो उठे और न ही वह इतिहास से ऐसा भी बन्धकर न चले कि वह शुष्क इतिहास ही रह जाएं ।

ऐतिहासिक व पौराणिक नाटकों की ऐतिहासिकता एवं पौराणिकता बहुत कुछ दृश्य विधानों में प्रस्तुत वातावरण तथा वेशभूषा पर निर्भर करती है । ये दोनों तत्व दर्शकों अथवा पाठकों को वास्तविकता की अनुभूति करा सकते हैं, तभी साधारणीकरण की रसानुभूति सम्भव होती है ।

१.३ ऐतिहासिक नाटकों का उद्भव :--

नाटकों की उत्पत्ति के विषय में पूर्वी तथा पाश्चात्य विद्वानों में परस्पर मत भेद है । पाणिनी " नाट्य " की उत्पत्ति " नट " धातु से मानते हैं, तथा रामचन्द्र गुणचन्द्र ने नाट्य " दर्पण में इसका विकास नाट धातु से माना है । वेबर और मोनियर विलियम्स का मत है कि नट धातु नृत धातु का प्राकृत रूप है । ऐसा प्रतीत होता है कि वैदिक काल में दोनों धातुएं समानार्थक होती गई, किन्तु कालान्तर में नट धातु का अर्थ अधिक व्यापक बन गया और नृत के अर्थ के साथ साथ अभिनय का अर्थ इससे लिपटता चला गया । इस प्रकार गंभीरता से विचार करने पर नृत और नृत्य नाट्य की ही दो प्रथम भूमिकाएं प्रतीत होती हैं ।

रूपक व नाटक दोनों शब्द पर्यायवाची होते हुए भी सूक्ष्म अन्तर वाले प्रतीत होते हैं । नाट्य में अवस्थाओं की अनुकृति को प्रधानता दी जाती है, किन्तु रूपक में अवस्थाओं की अनुकृति के साथ साथ रूप का आरोप भी आवश्यक है अर्थात् अवस्था की अनुकृति और रूपानुकृति का मिश्रित रूप रूपक कहलाने का अधिकारी बनता है ।

संस्कृत साहित्य में नाटक को प्रधानतः काव्य ही माना गया है । महिम भट्ट का मत है कि अनुभाव विभावादि के वर्णन से जब आनंदोपलब्धि होती है तो रचना काव्य कहलाती है और जब गीतादि से रंजित, नटों द्वारा उसका प्रयोग दिखाया जाता है तो वह नाटक बन जाता है ।[1] सागर नन्दी नामक आचार्य ने त्रैलोक्य के स्थान पर केवल इसी लोक के दुःख सुख पर बल दिया है । उनका कथन है कि इसी लोक के सुख-दुःख से उत्पन्न अवस्था के अभिनय का नाम नाट्य है । सागर नन्दी की यह व्याख्या भरत-मुनि के एक दूसरे श्लोक पर आधारित प्रतीत होती है । भरत मुनि कहते हैं -- यो यं स्वभावो लोकस्य सुख दुःख समन्वितः सोऽङ्गाद्यभिनयोपेतो नाट्यमित्यभिधीयते । भरतमुनि

---

१. अनुभावविभावानां वर्णना काव्यमुच्यते । तेषामेव प्रयोगस्तु नाट्यं गीतादिरंजितम्:

के इस मत की विस्तृत व्याख्या करते हुए आचार्य अभिनवगुप्त कहते हैं " नाटक वह दृश्य काव्य है जो प्रत्यक्ष कल्पना एवं अध्यवसाय का विषय बन सत्य एवं असत्य से समन्वित विलक्षण रूप धारण करके सर्व साधारण को आनंदोपभोग कराता है ।

नाट्य दर्पणकार रामचन्द्र गुणचन्द्र ने नाटक का लक्षण बताते हुए लिखा है जो प्रसिद्ध आद्य (पौराणिक एवं ऐतिहासिक) राजचरित का ऐसा वर्णन हो जो धर्म काम एवं अर्थ का फलदाता है और जो अंक उपाय (पंच अर्थ प्रकृति) दशा (पंचावस्था) से समन्वित हो वह नाटक कहलाता है ।[1]

साहित्य दर्पणकार विश्वनाथ नाटक का लक्षण करते हुए लिखते हैं नाटक वह रचना है जिसकी कथावस्तु रामायणादि एवं इतिहास में प्रसिद्ध हो, जिसमें विलास समृद्धि आदि गुण तथा अनेक प्रकार के ऐश्वर्यों का वर्णन हो, जहां सुख दुःख की उत्पत्ति दिखायी जा सके तथा अनेक रसों का समावेश हो सके, जिसमें पांच से दस तक अंक हो, जिसका नायक पुराणादि में प्रसिद्ध वंश में उत्पन्न धीरोदात्त प्रतापी गुणवान कोई राजर्षि अथवा दिव्य या दिव्यादिव्य पुरुष हो, जहां शृंगार तथा वीर रस प्रधान हो तथा अन्य रस अंगभूत हो, जिसकी निर्वहण सन्धि अत्यन्त अद्भुत हो, जिसमें चार या पांच पुरुष प्रधान कार्य के साधन में व्याप्त हो, गौ की पूंछ के अग्र भाग के समान जिसकी रचना हो ।[2] जब नाटक में दस से अधिक अंक हो जाते हैं तो वह नाटक नहीं रहता महा नाटक बन जाता है ।

आधुनिक काल में नाटक के लक्षण जनरुचि के कारण बदलने पड़े हैं । भारते-

---

१. ख्याताद्यराज चरितं धर्मकामार्थ सत्फलम् । सांकोपायदशासन्धिदिव्यांग ।

तत्र नाटकम् ना. द. पृ. १ श्लोक ५

२. देखिए - साहित्य दर्पण : षष्ठ परिच्छेद ६, ११

न्दु नाटक की व्याख्या करते हुए लिखते हैं, काव्य के सर्व गुण संयुक्त खेल को नाटक कहते हैं। इसका नायक कोई महाराज वा ईश्वरांश वा प्रत्यक्ष परमेश्वर होना चाहिए। रसश्रृंगार वा वीर। अंक पांच के ऊपर व दस के भीतर। आख्यान मनोहर और अत्यन्त उज्ज्वल होना चाहिए।" १

बाबू गुलाबराय जी के अनुसार नाटक में जीवन की अनुकृति को शब्दगत सीमाओं में संकुचित करके उसको सजीव पात्रों द्वारा एक चलते फिरते सप्राण रूप में अंकित किया जाता है। नाटक जीवन की लिखित अनुकृति नहीं है वरन् सजीव प्रतिलिपि है। नाटक में फैले हुए जीवन व्यापार को ऐसी व्यवस्था के साथ रखते हैं कि अधिक से अधिक प्रभाव उत्पन्न हो सके।

यूनान तथा अन्य पाश्चात्य देशों की भांति भारत में नाटकों की धार्मिक उत्पत्ति की कल्पना की गई है। ऋग्वेद में असंख्य रूप धारण करने वाला इन्द्र अपने नायकोचित कार्यों को नृत्य में प्रस्तुत करता हुआ बताया गया है। पुराणों में देवताओं के कार्यों को लीला की संज्ञा दी गई है। स्वयं भगवान को आदि अभिनेता माना गया है। जिसकी स्वत: मूल भाव सूक्ष्म संसार के कार्य कलाप के रूप में, बाह्य संसार के रूप में गोचर हैं। उपरोक्त विवेचन से यह सिद्ध होता है विद्वानों ने आलोच्य विषय पर अनेक अनुसन्धानात्मक तथ्य निरूपित किए परन्तु कोई एक सर्व सामान्य मत स्थिर न किया जा सका। भारतीय विद्वान वेदों में नाट्य कला का बीज पाते हैं। उनके अनुसार ऋग्वेद काल में पुरूरवा उर्वशी, यम, यमी, इन्द्र, इन्द्राणी के संवाद प्रचलित थे तथा सोमपान के अवसर पर लघु अभिनय भी किया जाता था। ब्राह्मण ग्रन्थों में भी पुरोहितों को नृत्य तथा अभिनय करते हुए बताया गया है। दैवी कार्यों को लीला की

---

१. भारतेन्दु नाटकावली - भाग - दो पृ. सं. ४२३

संवाद से अभिव्यक्त करने तथा रंग शाला की सम्पूर्ण प्रतीक योजनाओं द्वारा यह सिद्ध होता है कि भारतीय नाटकों का उद्भव धार्मिक एवं पावन है ।

प्रोफेसर मैक्समूलर के अनुसार नाटकों का आदि स्रोत वेदों के ब्राह्मण कांड के मंत्रों में स्थित है, क्योंकि यज्ञों के अवसर पर इन्द्र तथा मरुत के संवाद के मंत्र वेदों में निबद्धित होते हैं । १

प्रोफेसर लेवीन के अनुसार वैदिक काल में भारत में नृत्य व संगीत कला पूर्ण रूप से विकसित हो चुकी थी । उपरोक्त कथन से यह प्रमाणित होता है कि वेदों के मंत्रों के संवाद गद्य-पद्यात्मक रहे होंगे जो विविध कार्यक्रमों पर देवताओं द्वारा उच्चरित किए जाते होंगे । पद भाग मान प्रवीण व संगीत के निकट होने के कारण सावधानी से विरचित होते थे तथा वे आज तक सुरक्षित हैं। परन्तु गद्यांश श्रृंखलाबद्ध न होने के कारण अनिश्चित तथा अरक्षित रूप से केवल उल्लेख मात्र किए जाते थे । नाटक में नृत्य तथा संगीत का अंश उपयोगी होने के कारण वैदिक मंत्रों में आद्योपरान्त नाटकीय तत्व विद्यमान हैं । उपनिषद तथा संहिता काल में भी गीत तथा नृत्यों का यदा-कदा उल्लेख मात्र प्राप्त होता है जिसके आधार पर यह सिद्ध होता है कि अनेक धार्मिक अनुष्ठानों पर नाटक सामाजिक रूप से नाटक अभिनीत किए जाते रहे होंगे । विद्वानों में परस्पर इस विषय पर मतान्तर हो सकता है परन्तु हम इस विषय को एक पाश्चात्य विद्वान की धारणा के अनुसार मान लेते हैं कि नाट्य कला की उत्पत्ति उसी दिन हुई जिस दिन किसी बालक ने खेल खेल में अपने में किसी अन्य व्यक्ति की कल्पना की । २

पौराणिक काल :-

भारत के महान इतिहास काव्य महाभारत से उसके प्राचीनतर अंशों के संपूर्ण

---

१. देखिए --

२. देखिए -- परिशिष्ट - १ - उदाहरण १

आयाम में, नाटक के अस्तित्व का किसी व्यक्त रूप में पता नहीं चलता । परन्तु उस काल के नाटकों का अस्तित्व सिद्ध करने के लिए हमें हरिवंशपुराण का सहारा लेना पड़ता है, जो महाभारत का उद्देश्य पूर्ण अनुबंध है । उसमें नाटक विषयादि निश्चित साक्ष्य उपलब्ध होता है । क्योंकि उससे हमें ऐसे नटों की जानकारी प्राप्त होती है जिन्होंने रामायण के उपाख्यान से नाटक का निर्माण किया ।

नाटक का पुरानकालीन अस्तित्व सिद्ध करने के प्रयत्न में रामायण से कुछ सहायता नहीं मिलती । हमें ऐसे समारोहों तथा समाज की जिनमें नट एवं नर्तक आनन्द मनाते हैं और नाटकों के उल्लेख की भी सूचना मिलती है । एक अन्य स्थल पर यदि हम टीकाकार पर विश्वास करें मिश्रित भाषा के व्यक्तों का संकेत करता है ।

यद्यपि इतिहास काव्यों को नाटक से परिचित नहीं कहा जा सकता तथापि इस बात का पर्याप्त साक्ष्य प्राप्त होता है कि उनके पाठ ने नाटक के विकास पर गंभीर प्रभाव डाला । कदाचित् यह है इन महाकाव्यों में नाटकीय दृश्य दृष्टिगोचर होते हैं । आदि कवि वाल्मीकि ने राज्याभिषेक का वर्णन करते समय विभिन्न प्रकार के उत्सवों का वर्णन किया है -

नटनर्तकसंघाना गायकाना च गायताम् ।

यत: कर्ण सुखावाच: शुश्रव जनता तत: ॥ [१]

इस प्रसंग से यह स्पष्ट लक्षित होता है कि रामायण काल में नाटक मंडलियां विद्यमान थीं तथा नाटक अवश्य अभिनीत होते थे । लव-कुश व लव ने जो राम को सीता व्यथा की कथा सुनाई उसके संबंध में कुछ विद्वानों का मत है कि वे वास्तव में कुशीलव नट ही थे । ऐसे प्रसंगों के अनेक उल्लेख परिलक्षित होते हैं , जिससे हम इस तथ्य का अनुमान करते हैं कि रामायण काल में नाटक मंडलियों का अस्तित्व रहा हो क्योंकि रामायण

---

१. देखिए — वाल्मीकि रामायण ।

समय-समय पर धार्मिक ,सामाजिक तथा राष्ट्रीय पर्वों पर प्रजा के साथ एकात्म की आनन्दोल्लास की प्रतीति करते थे ।

महाभारत अनेक कथाओं का वृहत संग्रह है । इसमें दो नाटकों का स्पष्ट उल्लेख मिलता है । (१) रामायण नाटक, (२) कौबेररम्भाभिसार नाटक । इन नाटकों के अभिनय का विलक्षण इतिहास है । कौबेररम्भाभिसार नाटक में तो किस किस व्यक्ति किस पात्र की भूमिका की इसका तक विवरण प्राप्त है । महाभारत के हरिवंशपर्व में प्रद्युम्न विवाह की कथा नाटक के रूप में चित्रित की गई है । वासुदेव जी के अश्वमेध यज्ञ भद्र नामक नट द्वारा अपनी नाट्य कला से महर्षियों को प्रसन्न करने की कथा का उल्लेख प्राप्त है । भद्र नामक नट के अभिनय को नाटक या रूपक का आदि रूप माना जा सकता है । प्रद्युम्न विवाह के पूर्व शुचिमुखी नामक नट ने प्रभावती को उसके सुन्दर पति का वर्णन अभिनय के साथ इस प्रकार प्रस्तुत किया जिसको देखकर उस पर मोहित हो गई। श्री कृष्ण ने भी भद्र नामक नट के साथ वज्रनाभ की नगरी में जाने का आदेश दिया था । उस नट मंडली में पारिपार्श्वक, विदूषक नायक आदि थे । इसी नट मण्डली ने रामायण के कथानक को रंगमंच पर अभिनीत किया । इसी संदर्भ में अनेक तत्कालीन लोक-कथाओं में नाटकीय तत्वों की उपलब्धि होती है ।

पाणिनी ने शिलालिन और कृशाश्व द्वारा रचित बताए जाने वाले नटसूत्रों का जो नटों के लिए रचित पाठ्य पुस्तकें उल्लेख किया है । यह तथ्य उनके अनुयायियों (शिलालियों तथा कृशाश्वियों) के गृहित नामों की रचना के प्रसंग में अभिलिखित है ।

जैन व बौद्ध-काल :--

कौटिल्य का अर्थशास्त्र इस बात की पुष्टि करता है कि उस समय नट,नर्तक, गायक, वादक, कथावाचक, कुशीलव, शौभिक, ऐन्द्रजालिक, चारण आदि विद्यमान थे ।

यदि नटों की कोई मंडली बाहर से खेल दिखाने के लिए आती थी तो उसे प्रत्येक खेल पर पांच पण राजा को कर के रूप में देना पड़ता था । [१] उस काल में राजकीय शिक्षा व्यवस्था का इन नटों के लिए प्रसार था । अर्थ शास्त्र इस तथ्य की पुष्टि करता है कि गणिका, दासी, नट, नटियों को गाना बजाना अभिनय करना आदि चौंसठ कलाएं सिखाने के लिए योग्य आचार्यों का प्रबन्ध राजा की ओर से होता था । [२]

बौद्ध काल में भारत में नाट्य कला के व्यापक प्रचार का प्रमाण विनय पिटक में प्राप्त है । विनय पिटक की एक कथा में अश्वजित और पुनर्वसु के टीकागिरी की रंग-शाला में जाने तथा युवतियों को गाना बजाना, अभिनय करना आदि चौंसठ कलाएं सिखाने के लिए योग्य आचार्यों का प्रबन्ध राज्य की ओर से होता था ।

बौद्ध काल में भारत में नाट्य कला के व्यापक प्रचार का प्रमाण विनय पिटक में प्राप्त होता है । विनय पिटक की एक कथा में अश्वजित व पुनर्वसु के टीकागिरी की रंगशाला में जाने तथा युवतियों के साथ मधुर आलाप करने का स्पष्ट उल्लेख प्राप्त है ।

पतंजलि कृत महाभाष्य में नाटक के अस्तित्व के सम्बन्ध में अधिक सार्थक प्रमाण प्राप्त होते हैं । उसमें दो ऐतिहासिक नाटकों का विवरण उल्लिखित है । कंसवध एवं बालि वध । कंसवध नाटक नट अपनी आकृति रंग कर प्रदर्शित करते थे । डा. कीथ इस विवरण से यह निष्कर्ष निकालते हैं कि उस समय नट केवल नर्तक से ही नहीं रह गये थे वे निपुण संगीतज्ञ थे तथा संगीत तथा अभिनय द्वारा नाटक अभिनीत करते थे । [१] डा कीथ के अनुसार संस्कृत नाटकों का उदय द्वितीय शताब्दी के पूर्व नहीं तो उसके कुछ समय पश्चात ही हुआ । जिनके विकास गायन वादन तथा कृष्ण के लोक रंजनकारी रूप को अभिनीत कर प्रदान किया गया । [३]

---

१ देखिए - कौटिल्य अर्थशास्त्र -अध्यक्ष प्रचार अधिकरण २७ वां अध्याय
२ देखिए कौटिल्य अर्थशास्त्र ।
३. देखिए संस्कृत ड्रामा - डा कीथ
४ देखिए [illegible]

वात्स्यायन के कामसूत्र में सरस्वती भवन नामक स्थान पर पर्वों तथा अन्य राजकीय उत्सवों पर अभिनय होने का विवरण प्राप्त होता है । इसके अतिरिक्त जैन व बौद्ध काल काल के अन्तर्गत अनेक लोक-नाटकों का विवरण प्राप्त होता है । उस समय तक नाटकों की लोक-प्रियता में इतनी वृद्धि हो गई थी कि पारिवारिक उत्सवों पर भी नागरिक नाटकों की व्यवस्था करते थे । तत्कालीन नागरीक रंगमंच तथा प्रेक्षा-गृह से भी परिचित थे ।

" काव्येषु नाटकम् रम्यम् " के अनुसार नाटक आदि से जन जीवन के मनोरंजन का साधन रहा है । तत्कालीन समाज में साहित्यिक नाटक राजकीय वर्ग के लिए तथा लोक एवं यात्रा नाटक सर्व साधारण जनता के लिए अभिनीत किये जाते थे ,तात्पर्य यह है कि विभिन्न रुचि के वर्गों के लिए विभिन्न प्रकार के नाटकों की व्यवस्था थी । तत्कालीन समाज हास्य विनोदमय नाटक ही रुचिकर समझता था । कारण यही कि सदैव यही परिपाटी रही है कि जन-नाटक साहित्यिक नाटकों को प्रभावित कर लेते हैं । साहित्यिक नाटकों के अतिरिक्त स्वांग, रास, नौटंकी,भांड, झूमर, तमाशा तथा भगवत मेला का भी प्रचलन था । परन्तु इनमें संगीत तथा गद्य का प्रायः अभाव रहता था ।

कालान्तर में जैन व बौद्ध धर्म विकृत होकर महायान, हीनयान, तथा व्रजयान में विभक्त होकर जन साधारण में प्रचलित हुआ उसी समय डोमिनी के स्वांग का प्रचलन प्रारम्भ हुआ । भांड जाति का व्यवसाय उस समय केवल अभिनय कर जनता का स्वस्थ मनोरंजन करना था । उस समय विकसित स्वांग का प्रचलन सत्रहवीं शताब्दी तक था । जायसी ने भी अपने युग में स्वांगों का वर्णन करते हुए अपने बहुचर्चित काव्य पद्मावत में कहा है ।

पातुरी एक हुति जोगि स्वांगी ।

साह भेस वियोगिनी हुत जोगि मांगी ।।

जोगिनी भेस वियोगिनी कीन्हा ।

सींगी सबद मूल तत लीन्हा ।। १

तुर्फान में पुराकालीन ताड़पत्रों पर लिखित पांडुलिपियों की उपलब्धि से प्रोफे-सर लूडर्स के प्रयत्न के फलस्वरूप बौद्ध कालीन नाटकों के अस्तित्व पर प्रकाश पड़ता है । तत्कालीन अश्वघोष एक ऐसे नाटककार हैं जिनका यश उनके बौद्ध होने की भूल के कारण बहुत समय धूमिल रहा । ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में ~~ह-अश्वघोष~~ अश्वघोष के नाटकों ने अभिनय के क्षेत्र में युगान्तकारी प्रयोग किए । उनके काल तक नाटक की विभिन्न विधाओं तथा अनेक रूपकों का अस्तित्व प्रकाश में आ चुका था । " शारिपुत्र प्रकरण " अश्वघोष विरचित ऐतिहासिक नाटक है । इस तथ्य को सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है कि अश्वघोष की पद्धति तथा पाश्चात्य नाटकीय पद्धति में केवल भरत वाक्य का अंतर मिलता है ।" शारिपुत्र-प्रकरण " के सभी पात्र ऐतिहासिक हैं तथा तत्कालीन वातावरण को सजीव रूप में प्रस्तुत करने में पूर्णतया समर्थ हैं ।

प्रस्तुत नाटक में गौतम बुद्ध के द्वारा युवक मौद्गल्यायन तथा शारिपुत्र के मत परिवर्तन की घटना प्रक्रिया का वर्णन है, जो तत्कालीन धर्म परिवर्तन, कर्मकाण्ड, एवं जैन व बौद्ध धर्म की स्पर्द्धा का सजीव चित्रांकन प्रस्तुत करता है । नाटक में शारिपुत्र तथा गौतम बुद्ध के बीच दार्शनिक संवादों की योजना की गई है । विवेचनीय तथ्य यह है कि इसी समय से गौतम की जीवनी पर नाटक रचना का प्रारम्भ हुआ ।

भास ने अनेक बहुचर्चित नाटकों की रचना की, जिनमें से अधिकांश की कथावस्तु ऐतिहासिक व पौराणिक हैं । " प्रतिज्ञायौगन्धरायण " एवं स्वप्नवासवदत्तम " का कथानक वत्सराज उदयन से सम्बन्धित है जो ऐतिहासिक व पौराणिक नायक है । प्रतिमा-नाटक " अविमार," दूतवाक्य " दूतघटोत्कच " उरुभंग, तथा बाल चरित, महाभारतकालीन

---

१. जायसी ग्रन्थावली - पंडित रामचन्द्र शुक्ल - पृ.सं. २७५

कथानक पर आधारित नाटक हैं। प्रस्तुत समस्त नाटकों में स्वप्नवासवदत्तम् " सर्व श्रेष्ठ नाटक माना जाता है जो ऐतिहासिकता की कसौटी पर भी पूर्णतया खरा सिद्ध होता है।

शूद्रक रचित " मृच्छकटिक " तत्कालीन नाटकों में अपूर्व स्थान रखता है, जिसका कथानक भास रचित चारुदत्त से बहुत कुछ साम्य रखता है। इस काल से " मृच्छ-कटिक " के समान वेश्यानायकात्मक अन्य नाटकों की भी रचना की जाने लगी। " कुन्द-गंध " जैसे हास्य प्रधान नाटक ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

नाट्य-साहित्य के इतिहास में कालिदास की नाट्यकला को सर्वोपरि माना जाता है।[१] मालविका अग्निमित्र, विक्रमोर्वशी " तथा अभिज्ञान शाकुन्तल " इनके विश्व प्रसिद्ध नाटक हैं। मालविका अग्निमित्र एक तत्वत: एक तरुण होनहार कवि की कृति है। विक्रमोर्वशी में कालिदास की प्रतिभा का सुस्पष्ट विकास दिखाई देता है। प्रस्तुत नाटकों के कथानक ऋग्वेद में प्राप्त होते हैं। मत्स्य-पुराण में वर्णित कथा का कालिदास के वर्णन से बहुत कुछ सादृश्य है। कवि कालिदास कृत " अभिज्ञान शाकुन्तल की कथा का मूल स्त्रोत महाभारत है, परन्तु वहां से कथानक को बीज रूप में लिया गया है, उसका परिमार्जित तथा परिष्कृत रूप कवि की मौलिक कल्पना है।

<u>मध्यकालीन ऐतिहासिक नाटक :--</u>

मध्यकालीन ऐतिहासिक नाटककारों में हम सर्व प्रथम चन्द्र अथवा चन्द्रक की गणना करेंगे। चन्द्र के अस्तित्व तथा नाटककार रूप में उनके व्यक्तित्व के विषय में सन्देह है। हमें उनके द्वारा रचित " लोकानन्द " का तिब्बती संस्करण प्राप्त है। यह एक बौद्ध नाटक है जिसमें किसी मणिचूड़ का वर्णन है। परन्तु सीमित तथ्य प्राप्त होने से

---

१. कालिदास को भारत का शेक्सपियर " नाम से भी अभिहित किया जाता है।

कारण प्रस्तुत नाटक की ऐतिहासिकता सिद्ध नहीं की जा सकती ।

विद्यानुरागी राजा हर्ष अपने समय के कुशल शासक ही नहीं अपितु श्रेष्ठ साहित्य स्रष्टा भी थे । उनके द्वारा रचित बहुचर्चित नाटकों में " रत्नावली " प्रिय दर्शिका तथा "नागानन्द है । विषय वस्तु तथा रूप रचना की दृष्टि से " रत्नावली " तथा प्रियदर्शिका का घनिष्ठ सम्बन्ध है । ये लघु नाटिकाएं हैं, जिनका नायक वत्स द्वारा बहुचर्चित उदयन है । दोनों का विषय उसके बहु सम्यक प्रणय प्रसंगों में से एक है । नाट्य शास्त्रियों ने रत्नावली को विशेष रूप से आदर दिया है तथा शास्त्रीय नियमों के उदाहरण के रूप में उसका उपयोग किया है ।

उत्कृष्ट नाटक कारों में कालिदास के पश्चात भवभूति को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है । भवभूति द्वारा रचित तीन नाटक प्राप्त है " मालतीमाधव " उत्तर रामचरित तथा "महावीर चरित " मालती माधव" शृंगारिक प्रणय कथा पर आधारित नाटक है । डा. कीथ के मतानुसार यह बात इस सीमा तक सत्य है कि प्रेम प्रबन्ध का निर्माण करने वाले तत्वों का संयोजन स्पष्ट रूप से कवि का अपना है यद्यपि कहानी के मुख्य अभिप्राय और प्रमुख प्रसंगों का सादृश्य उपलब्ध कथा साहित्य में मिल सकता है ।[१] " महावीर चरित का स्त्रोत बहुत भिन्न है, उसमें प्रधान घटनाओं का वर्णन करते हुए कथोपकथन के माध्यम से रामायण की मुख्य कथा का निरूपण किया गया है । नाटकीय प्रभाव के कथानक को पूर्णतया नवीन व मौलिक रूप दिया गया है । " उत्तररामचरित " का आधार रामायण का अंतिम उत्तर-काण्ड है । इसका कथानक सीता वनवास से उनके पाताल लोक पश्चात तक है ।

---

१. संस्कृत नाटक (मूल लेखक - डा.कीथ) अनुवादक -- डा उदयभानु सिंह
पृ.सं. १८२-१८३

विशाखदत्त रचित " मुद्राराक्षस " युगांतकारी राजनैतिक एवं ऐतिहासिक नाटक माना जाता है । नाटककार के समय तक नाटकों के अनेक भेद उपभेदों का ज्ञान हो चुका था । " मुद्राराक्षस " मौर्यकालीन इतिहास तथा राजनैतिक षड्यन्त्रयोग पूर्ण नाटक है । जिसका केन्द्र नंदों का मूल पूर्व मंत्री राक्षस है । प्रस्तुत नाटक के सभी पात्र ऐतिहासिक है, परन्तु कहीं कहीं रिक्ततापूर्ति के लिए कल्पना का आश्रय लिया गया है । नाटक के व्यापार में आद्योपान्त रोचकता है । परस्पर विरोधी चाणाक्य तथा राक्षस का चरित्र चित्रण अत्युत्तम है । नाटक में दृश्य विभाजन नहीं किया गया है अपितु मुख्य पात्र आरम्भ से अन्त तक रंगमंच पर उपस्थित रहते हैं । दृश्य परिवर्तन की सूचना संकेतों द्वारा दे दी जाती है , जिसका मुख्य कारण नाटक का घटना प्रधान होना है । आधुनिक नाट्य विधा के बीज रूप को प्रस्तुत नाटक में देखा जा सकता है । नाटकीय तत्वों तथा शैली की शैली से यह पूर्ण अभिनेय तथा सौष्ठव पूर्ण है ।

तत्कालीन नाटकों में भट्ट नारायण के " वेणीसंहार " को महत्ता प्राप्त है । नाटककार ने विषयवस्तु के रूप में महाभारत के एक कथा प्रसंग को चुना है तथा उसको नाटकीय रूप देने का प्रयत्न किया है । सूक्ष्म विवेचन से ज्ञात होता है कि प्रस्तुत नाटक अभिनेय नहीं है । क्योंकि वर्णनों ने कार्य व्यापार को अवरुद्ध कर दिया है । रस निरूपण की दृष्टि से इसमें वीर रस प्रधान है ।

मुरारी का एक मात्र उपलब्ध नाटक " अनर्घराघव " है, जिसमें उन्होंने प्रस्तावना में ही पाठकों के मनोरंजन का उद्देश्य स्पष्ट कर दिया है । नाटक का कथानक रामचरित है जिसके औचित्य को नाटककार ने सिद्ध किया है ।

राजशेखर ने " बाल रामायण " बाल भारत " तथा कर्पूर मंजरी " जैसे नाटकों की रचना की । इनके नाटकों का कथानक पौराणिक होते हुए भी प्राचीन परिपाटी से कुछ हट कर था । " बाल रामायण " महा नाटक है , जिसमें रूढ़िवादिता से हट कर अर्वाचीन-

ता को महत्ता प्रदान की गई है, क्योंकि नाटककार ने रावण के राग को महत्वपूर्ण वैशिष्ट्य प्रदान किया है ।" बाल भारत " अपूर्ण नाटक है । इसका कथानक द्रौपदी विवाह द्यूत तथा वनवास से संबंधित है । " कर्पूर मंजरी " के पात्रों की नामावली तो प्राचीन ग्रन्थों में प्राप्त है, परन्तु उनकी ऐतिहासिकता अभी तक सिद्ध नहीं हो पाई है ।

" नैषधानन्द " तथा " चण्डकौशिक " के रचनाकार क्षेमीश्वर को आधुनिक आलोचकों ने महत्वहीन ही सिद्ध किया है । क्षेमीश्वर के दो नाटक उपलब्ध हैं । सात अंकीय " नैषधानन्द " में इतिहास काव्य तथा परवर्ती साहित्य में विख्यात नलोपाख्यान का वर्णन है ।" चण्डकौशिक " का कथानक सतयुगी सत्यप्रिय हरिश्चन्द्र की जीवनी से सम्बन्धित है ।

कालान्तर के नाटकों में जयदेव कृत प्रसन्न राघव " का ऐतिहासिक नाटक परम्परा में विशिष्ट स्थान है । प्रस्तुत नाटक में नाटक कार ने रामायण की कथा की पुनरावृत्ति की है । मथुरादास कृत " वृषभानुजा " में कृष्ण व राधा के प्रणय को नाटकीय रूप प्रदान किया गया है । बाल सरस्वती रचित पारिजात मंजरी" में असंदिग्ध रूप से ऐतिहासिकता का निर्देश मिलता है ।

" कृष्णोपाख्यान ने असंदिग्ध रूप से कम ध्यान आकृष्ट नहीं किया । केरल के रवि वर्मा ने " प्रद्युम्नाभ्युदय नामक नाटक की रचना की । क्षेमेन्द्र कृत " चित्र भारत " अब उपलब्ध नहीं है । परवर्ती नाटककारों में वामन भट्ट ने पार्वती परिणय की रचना की जिसे प्रांतिवश बाण की कृति समझी जाने के कारण कुछ अत्यधिक ख्याति प्राप्त हुई ।

जयसिंह सूरि कृत " हम्मीर मर्दन " महत्वपूर्ण नाटक है, जिसमें तत्कालीन राजाओं का वर्णन है । कहा नहीं जा सकता कि कृष्ण मिश्र का " प्रबोध चन्द्रोदय " नाटक के उस रूप का (जो अश्वघोष के समय से ही एक छोटे पैमाने पर प्रयुक्त होता रहा)

पुनरुज्जीवन है । अथवा एक सर्वथा नवीन रचना है, जिसका होना सत्य संभव भी है ।अ:
अंकीय इस नाटक में वैष्णव मत के अद्वैत सिद्धान्त का पिष्ट पेषण किया गया है ।नाटक
कार ने जिस कौशल के साथ महाभारत में वर्णित एक वंशीय जातियों के संघर्ष नाटक के
रीतिबद्ध कथानक तथा शृंगार रस के साथ दार्शनिकता का समावेश किया है वह सराहनीय
है ।

उत्तरकालीन नाटकों में " हनुमन्नाटक " को विशिष्ट स्थान प्राप्त है ।प्रोफेसर
लूडर्स ने छाया नाटकों की सूचि में इसकी गणना की है । परम्परागत किंवदंती यह है कि
हनुमान ने स्वयं इस कृति की रचना की थी, इसी लिए यह " हनुमन्नाटक " कहलाया ,
इसका कथानक रामायण से लिया गया है । प्रस्तुत नाटक की तुलना जयदेव कृत (गीत-
गोविन्द) से की जा सकती है ।

यशपाल के " मोह पराजय " तथा कवि कर्ण पूर्ण के " चैतन्य चन्द्रोदय " की
गणना छिटपुट ऐतिहासिक नाटकों में की जा सकती है । रामभद्र दीक्षित कृत "जानकी
परिणय " तत्कालीन ऐतिहासिक नाटकों में पथ प्रदर्शक नाटक माना जाता है । दो शेष
नाटक सियापरिणयन " तथा जीवनानंदन " के रचयिता वैद्य कवि हैं तथा इन्हीं की सम-
कालीन कृति गोकुलनाथ की कृति " अमृतोदय " है । मध्यकालीन ऐतिहासिक नाटकों में
अंतिम कृति लक्ष्मीराम कृत " रुक्मिणीहरण " नाटक है । जिसमें कृतिकार ने कृष्ण के परं-
परागत जीवन को आधुनिक रूप देने का यत्न किया है ।

आधुनिक काल :--

उन्नीसवीं शती का प्रथम चरण नाट्य साहित्य के इतिहास में नवीन जागरण
जीवन व चेतना लेकर आया । इसी समय में युरोपिय नाट्य साहित्य में टी.डब्ल्यु राबर्ट-
सन ने अपने सोसायटी कास्ट तथा आवर्स " से नवयुग उपस्थित कर दिया । इसी के परि-
णाम स्वरूप भारत में भी नवयुग ने अंगड़ाई ली तथा साहित्य में नवीन विधा के प्रयोग
[illegible]

न्वर प्रस्तुत किया, जिससे नाटक के आयाम परिवर्तित हो गये । सामाजिकता, नैतिकता, शील शैली एवं परम्परा आदि की नवीन परिभाषा एं जनजीवन के समक्ष प्रस्तुत की गई ।कला में नवीनता तथा स्वाभाविकता का अधिकाधिक का समावेश होने लगा । संदीप में इब्सन के प्रभाव से पांच तत्व नाट्य साहित्य में प्रवेश हुए ।

(१) इतिहास की ममता, त्याग कर लेखक वर्तमान समाज से अपने नाटक के लिए विषय की खोज करने लगा । वर्तमान से दूर न जाकर अपने निकट की दैनिक समस्याओं को सुलझाने में कलाकार ने तत्परता दिखाई ।

(२) नाटक के पात्र सम्भ्रान्तशाली उच्च कुलोत्पन्न, राजा, सामन्त आदि न होकर समाज के साधारण व्यक्ति होने लगे । कलाकार उनके दैनिक जीवन की समस्याओं का चित्रण करने में कला की सफलता मानने लगा ।

(३) व्यक्तिगत संघर्षों की अपेक्षा विचारों का संघर्ष पात्रों में अधिक दिखाया जाने लगा । मानसिक उथल पुथल अन्तर्द्वन्द और चरित्र की विभिन्नता को महत्व दिया जाने लगा ।

(४) स्वगत कथनों का प्रयोग कम होने लगा ।

(५) नाटकीय निर्देशों को नाटक में स्थान प्राप्त हुआ । नाटकों की की अभिनेयता पर नाटककारों का ध्यान आकृष्ट हुआ । कला, जीवन, विचार, अभिनय आदि सभी में स्वाभाविकता को महत्व प्राप्त हुआ । नाटकों को रंगमंचीय बनाने में नाटककार जार्ज बनार्डशा, गाल्सवर्दी तथा इब्सन से बहुत प्रभावित हुए ।

संस्कृत नाट्य साहित्य के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि संस्कृत नाटकों की अविरल धारा प्राय: मुसलमानों के भारत आगमन के साथ ही टूट गई । हिन्दी ऐतिहासिक नाटकों की परम्परा अपने व्यवस्थित व विकसित रूप में भारतेन्दु युग से आरम्भ होती है, जो आज तक सुधार रूप से चल रही है । भारतेन्दु ने हिन्दी नाट्य साहित्य के मार्ग का पथ प्रदर्शन किया । अत: इस आधुनिक काल के नाट्य साहित्य का विवेचन भारतेन्दु युग से

करें ।

भारतेन्दु-युग :--

भारतेन्दु-काल के नाटकों का उचित मूल्यांकन करने के लिए उस युग की संक्रमणात्मक स्थिति की गहराई में पैठना आवश्यक है । यह काल राष्ट्रीय जागरण व नव सांस्कृतिक चेतना का उन्मेष युग है । भारतेन्दु तथा उनके समकालीन नाटककारों ने जीवन के विविध क्षेत्रों से कथावस्तु का चयन कर, कहीं उसमें सामाजिक, कहीं धार्मिक तो कहीं ऐतिहासिक एवं पौराणिक इतिहास के ब्याज से सांस्कृतिक जागरण का दिव्य सन्देश दिया है ।

भारतेन्दु का पहला ऐतिहासिक नाटक हर्ष कृत " रत्नावली " का हिन्दी अनुवाद है । जिसका कथानक पौराणिक है । कंचन कवि कृत " धनंजय विजय व्यायोग का भी भारतेन्दु ने हिन्दी में अनुवाद किया । इसका कथानक पाण्डवों के अज्ञातवास से आरम्भ होकर अभिमन्यु विवाह पर समाप्त होता है । मुद्राराक्षस " के अनुवाद में भारतेन्दु ने कहीं कहीं परिवर्तन व परिवर्धन कर अपनी मौलिक कल्पना का प्रमाण दिया है ।

" सत्य हरिश्चन्द्र " भारतेन्दु की प्रथम मौलिक व सर्व श्रेष्ठ रचना है । प्रस्तुत नाटक सत्यप्रिय हरिश्चन्द्र की पौराणिक कथा के आधार पर लिखा गया है। जिस पर क्षेमीश्वर के संस्कृत नाटक " चण्डकौशिक " का प्रभाव पड़ा है । आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इस नाटक को अनूदित मानते हुए लिखा है, " सत्य हरिश्चन्द्र मौलिक नाटक समझा जाता है । पर हम ने एक पुराना बंगला नाटक देखा है जिसका यह अनुवाद कहा जा सकता है " । [1]

---

१. हिन्दी साहित्य का इतिहास -- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल -- पृ. ४.

श्री चन्द्रावली " भारतेन्दु का द्वितीय पौराणिक नाटक है । इसके नायक महाभारत के श्री कृष्ण है । नाटक के सभी पात्र पौराणिक हैं, केवल पूरक पात्रों की कल्पना की गई है । कल्पना का आधार लेकर आध्यात्मिक तत्वों का निरूपण प्रस्तुत नाटक में हुआ है ।

भारतेन्दु का अंतिम पौराणिक नाटक सती प्रताप है, जिसमें सत्यवान व सावित्री के आदर्श दाम्पत्य प्रेम की कथा है । धार्मिक प्रवृत्ति के लोगों, विशेष कर स्त्रियों के लिए यह नाटक विशेष रोचक एवं उपयोगी है ।

ऐतिहासिक कथानक को लेकर भारतेन्दु ने केवल एक ही नाटक " नील देवी " की रचना की । हिन्दी साहित्य में " नीलदेवी " प्रथम ऐतिहासिक मौलिक नाटक है । सर्व प्रथम ऐतिहासिक सामग्री को लेकर सफल नाटक रचना के कारण नाटककार का प्रयास प्रशंसनीय है । इसके पात्र मुस्लिम राज्य काल से संबंधित हैं , परन्तु उद्देश्य भारतीय ललना-ओं को अपनी सतीत्व की रक्षा की शिक्षा देना है ।

पंडित प्रताप नारायण मिश्र ने कालिदास कृत अभिज्ञान शाकुन्तल का हिन्दी में स्वतन्त्र अनुवाद संगीत शाकुन्तल " नाम से किया । " हठी हमीर " इनका द्वितीय ऐतिहासिक नाटक है, जिसमें अलाउद्दीन खिलजी के आक्रमण तथा हम्मीरसिंह के वीरता पूर्ण युद्ध का वर्णन है ।

लाला श्री निवासदास की गणना भारतेन्दु के उत्तराधिकारी के रूप में की जाती है । इनका प्रथम पौराणिक नाटक " प्रह्लाद चरित " है, जिसकी कथावस्तु प्रसिद्ध प्रह्लाद आख्यान है, जिसकी समाप्ति नृसिंह अवतार पर होती है । " तप्ता संवरण " में केवल पात्रों के नाम पौराणिक है शेष कथा काल्पनिक तथा कालिदास नाम की शैली से प्रभावित है । " रणधीर मोहिनी " ऐतिहासिक प्रणय कथा पर आधारित है । लालाजी का अन्तिम ऐतिहासिक नाटक " संयोगिता स्वयंवर है, जिसकी कथावस्तु चन्द्रकृत पृथ्वीराज

राठौ से साम्य रखती है । परन्तु प्रस्तुत नाटक में कई ऐसी घटनाओं का वर्णन है, जिस की पुष्टि इतिहास द्वारा नहीं होती ।

राधाचरण गोस्वामी का " अमरसिंह राठौर " प्रसिद्ध ऐतिहासिक नाटक है जो मुगलकालीन इतिहास का सजीव चित्र प्रस्तुत करता है । " श्री दामा " पौराणिक कथानक पर आधारित है जिसमें दरिद्र सुदामा के श्री कृष्ण द्वारा उद्धार कथा है ।

राधाकृष्णदास का पहला ऐतिहासिक नाटक महारानी पद्मावती है। प्रस्तुत नाटक में मेवाड़ की विख्यात रानी पद्मिनी के रूप सौन्दर्य की प्रशंसा सुन, अलाउद्दीन खिलजी ने चित्तौड़ पर आक्रमण करने की कथा है । अपनी घटनाओं की ऐतिहासिकता सिद्ध करने के लिए लेखक ने आरम्भ में विस्तृत भूमिका भी दे दी है । इनका " महाराणा प्रतापसिंह " उच्च कोटि का ऐतिहासिक नाटक है । इसमें महाराणा प्रताप व अकबर के ~~ऐतिहासिक नाटक है।~~ के ऐतिहासिक कथानक के साथ साथ मालती व गुलाबसिंह की काल्पनिक गौण कथा भी चलती है ।

अयोध्यासिंह उपाध्याय ने दो पौराणिक नाटक " प्रद्युम्न विजय , " तथा रुक्मिणी परिणय " की रचना की, जिनमें प्रथम भारतेन्दु कृत " धनंजय विजय " की छाया को लेकर रचा गया है । रुक्मिणी परिणय का कथानक कृष्ण व रुक्मिणी के प्रणय से आरम्भ होकर शिशुपाल वध व अन्त में विवाह पर समाप्त हो जाता है ।

"दमयन्ति स्वयंवर " बालकृष्ण भट्ट का प्रथम पौराणिक नाटक है । पौराणिक कथा को लेकर शास्त्रीय पद्धति पर लिखे गये इस नाटक में कहीं कहीं संस्कृत के श्लोक भी मिलते हैं । इनकी द्वितीय रचना " वेणु संहार " के रूप में प्रस्तुत हुई है । जिसका पौराणिक कथानक अत्यन्त विख्यात है । परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि पौराणिक कथानक को लेकर नाटककार तत्कालीन व शासन व्यवस्था की आलोचना करना चाहता है ।

बदरीनारायण चौधरी " प्रेमघन " कृत " प्रयागरामागमन " का कथानक रामायण से लिया गया है । देवकी नन्दन त्रिपाठी ने अनेक पौराणिक नाटकों की रचना की।

जिनमें " रुक्मिणी हरण " कंसवध तथा " नन्दोत्सव " का कथानक कृष्ण जीवन से संबंधित है । शालिग्रामकृत " अभिमन्यु वध " महाभारत कालीन कथा को नाटकीय रूप में प्रस्तुत करता है । " पुरुविक्रम " में शालिग्राम जी ने इतिहास प्रसिद्ध पुरु व सिकन्दर के युद्ध की कथा का आधार बनाया है । " मोरध्वज " में महाभारत कालीन कथावस्तु को नाटकीय रूप दिया गया है । अंबिकादत्त व्यास ने तत्कालीन विजय गोलत्या को लेकर विषयवस्तु बना कर ऐतिहासिकता के आधार पर उसकी पुष्टि की है ।

लाला बख्श बहादुरमल ने " हरतालिका " तथा कल्पवृक्ष " नामक नाटकों की की जिनका आधार क्रमशः महाभारत तथा हरिवंश पुराण से लिया गया है । पण्डित बलदेव प्रसाद मिश्र ने " मीराबाई " तथा प्रभास मिलन " नामक नाटकों की रचना की जो क्रमशः इतिहास प्रसिद्ध मीराबाई तथा श्री कृष्ण के जीवन चरित्रों पर आधारित हैं । दामोदर शास्त्री कृत "रामलीला नाटक बृहदाकार नाटक है, जिसमें रामायण की संपूर्ण कथा को नाटकीय रूप देने का प्रयास किया गया है । ज्वालाप्रसाद कृत " सीता वनवास पौराणिक नाटक है । इनका दूसरा ग्रन्थ "तीन ऐतिहासिक रूपक " है जिसमें क्रमशः सिंध के राजा की कथा, भोपाल के राजा की विधवा रानी की कथा, तथा अंतिम नाटक उर्वशी का स्वप्न है जो कालिदास के रघुवंश से प्रभावित प्रतीत होता है ।

पंजाब के नाटककार सुदर्शनाचार्य का " अनर्घ नल चरित " नल व दमयन्ती की प्रसिद्ध पौराणिक कथा के आधार पर रचित है । गंगाप्रसाद का " रामाभिषेक " नाटक राम के राज्याभिषेक से संबंधित है । रामायण की कथा पर आधारित अन्य नाटकों में ब्रजचन्द का " रामलीला नाटक " गिरिधर लाल का रामवन यात्रा, नारायण सहाय का " रामलीला नाटक , रामगुलाम का "धनुष यज्ञ है । इनके अतिरिक्त कृष्ण चरित से सम्बन्धित नाटकों में गोरचरण गोस्वामी कृत "अभिमन्युवध तथा शिवनन्दन सहाय का " सुदामा " नाटक है । गोपालराम, गहमरी ने बाबू राजकृष्णराय के बंगला नाटक के आधार पर " बनवीर " नाटक की रचना की जिसमें इतिहास प्रसिद्ध राजपूत

वीरांगना पन्नाधाया के अपूर्व बलिदान की कथा है ।

प्रसाद-युग :—

ऐतिहासिक नाटक साहित्य के इतिहास में प्रसाद युग सर्वाधिक समृद्ध तथा विकसित युग है । प्रसाद की ऐतिहासिक प्रवृत्ति का अंकुर उनके प्रारम्भिक ऐतिहासिक नाटकों से स्पष्ट हो जाता है । राज्यश्री में उनकी प्रवृत्ति को दृढ़ता प्राप्त होती है । विशाख में उनका दृष्टिकोण अधिक स्पष्ट तथा विकसित हो जाता है । उनका कथन है, इतिहास का अनुशीलन किसी भी जाति को अपना आदर्श संगठित करने के लिए अत्यंत लाभदायक होता है - - - - - - - क्योंकि हमारी गिरी दशा को उठाने के लिए हमारी जलवायु के अनुकूल जो हमारी अतीत सभ्यता है, उससे बढ़ कर और कौन आदर्श हमारे अनुकूल होगा कि नहीं इसमें मुझे पूर्ण सन्देह है । मेरी इच्छा भारतीय इतिहास के उन अप्रकाशित अंश में से उन प्रकाण्ड घटनाओं का दिग्दर्शन कराने की है, जिन्होंने हमारी वर्तमान स्थिति को सुधारने का बहुत प्रयत्न किया है । [१]

नाटककार प्रसाद के रूप में प्रसाद का रचना काल १९१० से आरम्भ होता है । ' सज्जन ' का कथानक महाभारत की एक घटना है । पाण्डवों के अज्ञातवास के समय दुर्योधन की भेंट जंगल के स्वामी चित्रांग से होती है तथा वह बंदी बना लिया जाता है परन्तु अपने सज्जन भाइयों की सहायता से उसे छुटकारा मिलता है ।

' कल्याणी परिणय ' में चन्द्रगुप्त मौर्य के सिल्यूकस को परास्त करने तथा उसकी पुत्री कल्याणी से विवाह करने का ऐतिहासिक वृत्त है । कालान्तर में प्रसाद ने इसी कथानक को मुक्त रूप देकर प्रसिद्ध चन्द्रगुप्त नाटक की रचना की ।

---

१. विशाख — जयशंकरप्रसाद — भूमिका ' ।

प्रायश्चित " का कथानक इतिहास की एक किंवदंती का आश्रय लेकर खड़ा किया गया है । प्रतिकार तथा द्वेष बुद्धि से प्रेरित जयचंद में दुर्भावनाएं उत्पन्न होती हैं, तथा वह अपने जमाता पृथ्वीराज पर आक्रमण करता है । परन्तु दो विलासिनियों के द्वारा भर्त्सना किए जाने पर वह यवन शत्रु गोरी की सहायता देने के पाप कर्म का प्रायश्चित गंगा में डूब कर करता है ।

करुणालय दृश्य काव्य गीति नाट्य के रूप में रचित हुआ है । इसका कथानक सतयुगी हरिश्चन्द्र के जीवन से संबंधित है ।इस कृति से तत्कालीन देशकाल का परिचय मिलता है । इसके कुछ पात्र ऐतिहासिक कुछ पौराणिक व कुछ दिव्य हैं ।

" राज्य श्री " में प्रसाद की ऐतिहासिक प्रवृत्ति अधिक सबल व स्पष्ट हो उठी है । प्रस्तुत नाटक के द्वितीय संस्करण की भूमिका में प्रसाद जी ने स्वयं इसे अपना प्रथम ऐतिहासिक नाटक कहा है । इस नाटक रचना का उद्देश्य राज्य श्री के चरित्र को महत्व व उभार देना था । नाटक की कथावस्तु को बाण के हर्षचरित तथा ह्वेनसांग के भारत वर्णन से संकलित किया गया है । प्रथम संस्करण में नरेन्द्र गुप्त की मृत्यु को दिखाया गया है, परन्तु इतिहास द्वारा इस घटना की पुष्टि न होने के कारण द्वितीय संस्करण में इसे संशोधित कर दिया गया है ।

विशाख " का कथानक कल्हण कृत राजतरंगिणी से लिया गया है । प्रस्तुत नाटक बौद्ध इतिहास के पतन काल से संबंधित है । यह नाटक के ऐतिहासिक वातावरण में वर्तमान की झांकी प्रस्तुत कर पाठकों में कौतूहल और उत्साह सृजन करता है ।

वास्तव में प्रसाद जी की प्रौढ़ एवं यथार्थ नाट्य कला के दर्शन हमें सर्व प्रथम अजातशत्रु में होते हैं । यह नाटक भारत के विवादास्पद काल से संबंधित है । मगध,काशी, कौशल एवं कौशाम्बी इस नाटक के कथानक को विकसित करती हैं । जिन प्रौढ़ ऐतिहासिक नाटकों पर प्रसाद कीर्ति अवलंबित है उस श्रृंखला में अजातशत्रु पहली कड़ी है ।

जनमेजय का नागयज्ञ उपर महाभारत काल की कुछ घटनाओं को लेकर रचा गया है । इस नाटक का नायक अर्जुन के पौत्र परीक्षित का पुत्र जनमेजय है । प्रस्तुत नाटक का कथानक यद्यपि अत्यन्त प्राचीन काल से संबंधित है तथापि नाटककार ने उसका निर्वाह ऐतिहासिक पद्धति पर किया है एवं उसका कथानक को पौराणिक की अपेक्षा ऐतिहासिक रंग देने का प्रयत्न किया है ।

" स्कन्दगुप्त " गुप्तवंशीय इतिहास पर आधारित नाटक है । कला एवं नाट्य विधान की दृष्टि से प्रसाद कृत नाटकों में यह सर्व श्रेष्ठ माना जाता है ।" स्कन्दगुप्त " में प्रसाद ने पहले पहल इस ~~कथ्य~~ तथ्य को अपनाया है कि ऐतिहासिक नाटकों में राज-नैतिक घटनाओं के साथ साथ पारिवारिक घटनाएं भी जीवन पर प्रभाव डालती है " । १

चन्द्रगुप्त " प्रसाद का सर्व श्रेष्ठ एवं वृहत नाटक है । प्रस्तुत नाटकों में मौर्य कालीन इतिहास एवं चन्द्रगुप्त सम्बन्धी भ्रांतियों का निराकरण गहन ऐतिहासिक अध्ययन के आधार पर नाटककार ने किया है । प्रसाद जिस प्रवृत्ति एवं उद्देश्य को लेकर नाट्य साहित्य की रचना में प्रवृत्त हुए थे उसका चरम उत्कर्ष चन्द्रगुप्त नाटक में प्रकट होता है । प्रस्तुत नाटक में उनकी ऐतिहासिक शोध शक्ति जितनी प्रस्फुटित हुई है उतनी ही काव्य प्रतिभा भी प्रखर हो उठी है । फलत जहां ऐतिहासिक दृष्टि से नाटक का महत्व व उप-योगिता बढ़ गई है वहां इसमें नाटकीय कला की दृष्टि से उतना सौन्दर्य नहीं आ सका है ।" २

प्रसाद के समकालीन नाट्य साहित्य में रामचरित ~~व्यक्त~~ सम्बन्धी नहीं के बराबर रहीं । इसके अन्तर्गत केवल दो नाटकों का उल्लेख किया जा सकता है । दुर्गादत्त पाण्डे कृत राम नाटक तथा कुन्दनलाल शाह कृत रामलीला " कृष्णाधारा में केवल एक नाटक उल्लेखनीय

---

१. हिन्दी नाटक उद्भव और विकास -- डा दशरथ ओझा -- पृ. सं. ३५५
२. हिन्दी नाटक साहित्य का आलोचनात्मक अध्ययन - डा. वेदपाल खन्ना -- पृ सं. १५५

है, वह है हरिप्रसाद वियोगी हरि कृत "छंदामयी गिनी " भगवान कृष्ण की कुछ लीला ही इस नाटक का कथानक है ।

पौराणिक नाटकों में मैथिलीशरण गुप्त कृत " तिलोत्तमा की गणना की जाती है । " अनघ " एक मात्र नाट्य है जो प्रसाद की करुणालय वाली परम्परा का द्योतक है । चन्द्रहास में भक्त बालक चन्द्रहास के जीवन चरित्र को नाटकीय रूप दिया गया है । सुदर्शन कृत "अंजना " में पतिपरायणा अंजना तथा पवन की प्रबल प्रणय कथा है जो जैन ग्रन्थों तथा किंवदंतियों में अत्यन्त लोक प्रिय रही है । गोविन्द वल्लभ पन्त की वरमाला पौराणिक नाटक है जो भावना प्रधान होने के कारण प्रसाद के नाटकों से मेल खाता है ।

मिश्र बन्धुओं ने पूर्व भारत में महाभारत के आदि पर्व से लेकर विराटपर्व तक की कथा को ग्रहण किया है । कामताप्रसाद का सुदर्शनदेवी भागवत के तीसरे स्कन्ध पर आधारित हैं । जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द का प्रताप प्रतिज्ञा " स्वदेश प्रेम की भावना से ओतप्रोत है । प्रस्तुत नाटक में महाराणा प्रताप के जीवन चरित्र को नाटकीय रूप दिया गया है ।

प्रेमचन्द जी का "कर्बला " मुस्लिम सभ्यता को प्रस्तुत करता है । प्रेमचन्द जी ने उस युग को नाटकबद्ध अवश्य किया है परन्तु इस प्रयास में उन्हें अधिक सफलता नहीं मिली है । इनके अतिरिक्त कृष्ण कुमार कृत तुलसीदास "उदयशंकर भट्ट कृत "चन्द्रगुप्त और विक्रमादित्य, चन्द्रराज भण्डारी कृत " सिद्धार्थ कुमार" तथा सम्राट अशोक" प्रसाद युगीन महत्वपूर्ण ऐतिहासिक नाटक हैं ।

प्रसादोत्तर-युग :--

प्रसाद युगीन ऐतिहासिक नाटक साहित्य की रचना अतीत भारत की उज्ज्वल विभूति के सम्बन्ध में हुई थी । परन्तु प्रसादोत्तर काल में नाटक साहित्य के प्रति नाटक-

कारों की धारणाएं बदल गईं । गत महायुद्ध के कारण जीवन व साहित्य पर जनक्रान्ति करी एवं प्रभावशाली प्रभाव पड़ा । यांत्रिक जीवन के प्रति मानव की आस्था परिवर्तन एवं समयाभाव के कारण नाटककार वृहत नाटक रचना से एकांकी रचना पर आ गया । इस काल में केवल गिने चुने नाटकों की रचना हुई । इब्सन के प्रभाव के कारण ऐतिहासिक कथावस्तु का त्याग तथा सामाजिकता कथावस्तु का ग्रहण होने लगा था ।

प्रसादोत्तर नाटककारों में गोविन्द वल्लभ पन्त का स्थान अग्रगण्य है । राजमुकुट तथा अंत:पुर का छिद्र प्रमुख ऐतिहासिक नाटक हैं, जिनमें क्रमश: पन्नाधाय तथा बौद्धकालीन इतिहास को चित्रित किया गया है । पन्नाधाय की ऐतिहासिकता को टाड के राजस्थान के आधार पर सिद्ध किया जा सकता है ।

जब हरिकृष्ण प्रेमी की लेखनी कला सृजन के लिए सजग हुई तब राष्ट्र दासत्व की शृंखला तोड़ने के लिए संघर्ष कर रहा था । प्रेमी जी के अधिकांश नाटकों की कथावस्तु मुगलकालीन इतिहास पर आधारित है । "शिवा साधना" की सभी प्रमुख घटनाएं इतिहास के प्रकाश में चमक रही हैं । शिवाजी का जीवन चरित्र अफजल खां का मारा जाना इसकी प्रमुख घटनायें हैं, "मित्र" की प्रमुख घटना जैसलमेर पर अलाउद्दीन की चढ़ाई तथा रत्नसिंह द्वारा अपने पुत्र गिरिसिंह का महमूद खां को दिया जाना है । "उद्धार" का कथानक राजस्थान के वीर हम्मीरसिंह की वीरता तथा चित्तौड़ के उद्धार से संबंध रखता है, जो इतिहास प्रसिद्ध हैं । "स्वप्न भंग" की कथावस्तु अर्ध ऐतिहासिक तथा अर्ध काल्पनिक है । "रक्षा बन्धन" का कथानक हुमायु काल से सम्बन्धित है, जिसे मेवाड़ की रानी कर्मवती ने अपना भाई बनाया है । यह घटना इतिहास प्रसिद्ध है ।

लक्ष्मीनारायण मिश्र के दोनों नाटक "वत्सराज" एवं "अशोक" भारतीय इतिहास के स्वर्ण युग से संबंधित हैं । उदयशंकर भट्ट का "दाहर", "मुक्तिपथ" रामविजय प्रसिद्ध ऐतिहासिक नाटक हैं । भट्ट जी ने इतिहास की वे कथाएं ली जो अनजानी थीं

तथा जिनसे हमारे राष्ट्रीय व सांस्कृतिक पतन के बुनियादी कारणों पर प्रकाश पड़ता है। मुक्ति पथ का कथानक बौद्धकालीन इतिहास को प्रस्तुत करता है तथा उसके सभी पात्र ऐतिहासिक हैं। इस विजय की ऐतिहासिकता प्रसिद्ध पुरातत्व वेत्ता एवं इतिहासकार काशीप्रसाद जायसवाल सिद्ध की गई है।

इस काल में सब से अधिक ऐतिहासिक नाटकों की रचना सेठ गोविन्ददास ने की। कर्तव्य " कर्ण, कुलीनता " विकास " सिंहल द्वीप " विजय बेलि, शशिगुप्त, अशोक हर्ष तथा शेरशाह आदि उनके प्रसिद्ध ऐतिहासिक नाटक हैं। सेठ जी ने अपने नाटकों के कथानक को इतिहास पुराण तथा भागवत से लिया है। उनके नाटकों में ऐतिहासिक तत्व अधिक व कल्पना तत्व का कम प्रयोग हुआ है।

उपेन्द्रनाथ अश्क का " जयपराजय " ऐतिहासिक कथानक से संबंधित हैं, जिसके पात्र भारतीय सामान्त युग का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्रस्तुत नाटक की बुनियाद अहं पर निर्मित है तथा इसी अहं की तृप्ति में जय-पराजय का खेल समाप्त हो जाता है।

वृन्दावन लाल वर्मा का पूर्व की ओर प्रथम ऐतिहासिक नाटक है जिसका नायक वरवर्मा है। " फूलों की बोली " अरबी यात्री अलबेरुनी की एक कथा के आधार पर लिखा गया नाटक हैं। "बीरबल " अकबर कालीन राज्य की झलकी प्रस्तुत करता है। झांसी की रानी" इतिहास प्रसिद्ध रानी लक्ष्मी बाई की कथा तथा काश्मीर का कांटा १९४७ से भारत की घटनाओं को प्रस्तुत करता है।

पौराणिक धारा के अन्य नाटकों में उल्लेख योग्य हैं। उदयशंकर भट्ट कृत " अंबा ", सगर विजय" मित्स्यगंधा "तथा विश्वामित्र "। चतुरसेन शास्त्री कृत "मेघनाथ बेचन शर्मा उग्र कृत" गंगा का बेटा बेटा तथा डा. लक्ष्मण स्वरूप कृत "नलदमयन्ती में ऐतिहासिकता अधिक व काल्पनिकता कम है।

प्रसादोत्तर काल के अन्य ऐतिहासिक नाटकों में जिनकी गणना की जा सकती है वे हैं, तारका प्रसाद मौर्य कृत केदारनी, भगवतीप्रसाद "पांथरी कृत जाम्बी, श्यामकांत

श्यामकान्त पाठक कृत " बुन्देल केसरी" धनीराम कृत वीरांगना पन्ना , चन्द्रगुप्त विद्यालंकार कृत अशोक तथा रेवा " कुमार हृदय कृत " मन्नावैशज " गोपालचन्द्रदेव कृत छत्रपा शिवाजी, कैलाशनाथ भटनागर कृत `कुणाल` शिवदत्त स्वामी कृत नीमाड़ केसरी" परिपूर्णानन्द कृत रानी भवानी सत्येन्द्र कृत मुक्ति यज्ञ मायादत्त नैथानी कृत संयोगिता,मुरारी शरण मांगलिक कृत `मीरा` शम्भुदयाल सक्सेना कृत साधना, तथा हरिश्चन्द्र सेठ कृत `पुरु और ऐलेक्जेण्डर ।

वैकुण्ठनाथ दुग्गल कृत `समुद्रगुप्त प्रसादोत्तरकाल का महत्वपूर्ण व श्रेष्ठ नाटक है, नाटककार ने सम्राट समुद्रगुप्त के राजत्वकाल की सभी घटनाओं को प्रधानता न देकर केवल थोड़ी सी घटनाओं को ही प्रस्तुत कर बुद्धिमत्ता एवं चतुर इतिहासत्व का परिचय दिया है ।

मिश्र जी कृत वितस्ता की लहरें, उनके वत्सराज " से अधिक सौष्ठव पूर्ण एवं प्रौढ ऐतिहासिक नाटक है । इसके कथानक का आधार यवन विजेता सिकन्दर का सेना सहित वितस्ता [illegible] नदी के तट पर पहुंचना, रात्रि में चोरी से नदी के पार करना तथा पुरु के साथ उसका युद्ध है । कथा में इतिहास व कल्पना का सुन्दर समन्वय दृष्टिगोचर होता है ।

जगदीशचन्द्र माथुर कृत `कोणार्क " एक प्रौढ नाटकीय रचना है । इसका कथानक उड़ीसा में स्थित कोणार्क के प्रसिद्ध देवालय के निर्माण तथा विध्वंस की कथा को लेकर रचा गया है ।

देवराज दिनेश कृत `मानव प्रताप एक सफल ऐतिहासिक नाटक है । इस नाटक में नाटककार ने अपने नायक के उदात्त चरित्र पर इतिहास का आश्रय लेकर प्रकाश डाला है । चतुरसेन शास्त्री कृत " छत्रसाल " साधारण कोटि का ऐतिहासिक नाटक है, जिसमें औरंगजेब के लड़खड़ाते साम्राज्य के विरुद्ध बुन्देली वीर चम्पतराय और उसके पुत्र छत्रसाल के साहस और आत्म त्याग का चित्रण है ।

पृथ्वीनाथ शर्मा कृत " उर्मिला " पौराणिक कथानक प्रधान नाटक है । नाटककार ने कथावस्तु व चरित्र चित्रण में महाभारत का पूर्णता से अनुकरण किया है । पर्वदान मार्कण्डलाल जिज्ञासु का महाभारत के एक कथानक पर आधारित पौराणिक नाटक है । शक्ति पूजा " में श्री मुखर्जी सुजन ने महिषासुर के जीवन चरित्र को नाटक का रूप दिया है । रांगेय राघव का "स्वर्ण भूमि का यात्री " पौराणिक नाटक है ।

मिश्र जी कृत " चक्रव्यूह " प्रसादोत्तर काल का अंतिम ऐतिहासिक पौराणिक नाटक है । प्रस्तुत नाटक उत्तर प्रदेशीय सरकार द्वारा पुरस्कृत भी हो चुका है । कथानक द्रोणाचार्य के चक्रव्यूह के निर्माण तथा अभिमन्यु की मृत्यु से संबंधित है । नाट्य कला की दृष्टि से यह उच्च कोटि का नाटक है ।

प्रबन्ध के आलोच्य नाटककार डा. रामकुमार ने ऐतिहासिक नाटकों की अपेक्षा ऐतिहासिक एकांकियों की रचना अधिक की है । " विजय पर्व " तथा "अशोक " का शौर्य उनके मौर्य कालीन इतिहास से संबंधित हैं । कला व कृपाण " बौद्ध कालीन इतिहास का सजीव चित्र प्रस्तुत करता है । महाराणा प्रताप तथा " जौहर की ज्योति " राजपूतों के इतिहास को नाटकीय रूप दे उसकी गौरव गाथाको प्रस्तुत करता है । डा वर्मा की नवीनतम कृति सारंग स्वर " है जो इतिहास प्रेमी रूपमती तथा बाजबहादुर के कथानक पर आधारित नाटक है । १

---

१. विस्तार के लिए - देखिए - द्वितीय अध्याय ।

१.४ एकांकी :-

" ऐतिहासिक एकांकियों का उद्भव व विकास "

आधुनिक युग में एकांकी से आधुनिक एकांकियों का बोध होता है । आधुनिक एकांकी से हमारा तात्पर्य उन एकांकियों से है जिसका विकास हिन्दी साहित्य में पिछले कुछ दशकों से हो रहा है । संस्कृत एकांकी की शैली से इसमें काफी भिन्नता है । इसका अपना निजी विकास है, परन्तु इसके विकास में अंग्रेजी साहित्य का भी महत्वपूर्ण योगदान माना जाता है । एकांकी नाटक के अन्तर्गत है । आधुनिक हिन्दी नाट्य साहित्य के अधिकांश भाग को हिन्दी एकांकियों ने ही समृद्ध किया है । रंगमंच का अभाव तथा अवकाश की न्यूनता के कारण बड़े नाटकों के क्षेत्र में काफी प्रगति व विकास नहीं हो सका परन्तु हिन्दी एकांकी ने एक सीमित अवधि में बड़ी लम्बी यात्रा तय की है ।

नाटक वह कहानी है जो अभिनेताओं द्वारा दर्शकों के सम्मुख रंगमंच पर प्रदर्शित की जाती है । एकांकी वह नाटक है जो एक ही अंक में पूर्णता प्राप्त करता है । एकांकी की सरलतम परिभाषा यही हो सकती है ।[१] इसे सरलता से समझने के लिए अंक की परिभाषा अपेक्षित है । साहित्य दर्पणकार विश्वनाथ ने अंक की परिभाषा इस प्रकार की है ।" अंक नाटक का वह अवच्छेद अथवा अन्तर्विभाग है । जिसमें सामाजिकों की दृष्टि नायक, चरित्र का साक्षात्कार किया करती है, जिसमें रस भावों का अभिव्यंजन सौन्दर्य स्पष्ट प्रतीत हुआ करता है, जिसके शब्द से अर्थ तथा अर्थ से कवि हृदय स्वभावत: झलका करता है ।[२] इस प्रकार अंक रूपकों के अवच्छेद अथवा अन्तखण्ड का नाम है ।

पाश्चात्य विद्वानों ने अंक और दृश्य की जो परिभाषा दी है, वह भारतीय

---

१. हिन्दी एकांकी की शिल्पविधि का विकास - डा सिद्धनाथकुमार - पृ.सं. ३०
२. साहित्य दर्पण (६.१२.१६) विश्वनाथ

परिभाषाओं से बहुत कुछ समानता रखती है । अंग्रेजी में अंक को " एक्ट " तथा दृश्य को " सीन " कहते हैं । द ऑक्सफोर्ड कम्पैनियन टू द थियेटर में " एक्ट " की परिभाषा करते हुए कहा गया है कि नाटक के विभागों को एक्ट कहते हैं , उनमें से प्रत्येक में एक या अधिक सीन हो सकते हैं ।[1]

" एकांकी नाटकों की टेक्निक का उत्कर्ष विशेष रूप से अंग्रेजी साहित्य से हुआ है । इस विषय पर उस साहित्य में काफी विवेचना हुई है । यद्यपि संस्कृत साहित्य में उसके शिल्प के उपकरण विद्यमान हैं, तथापि आधुनिक हिन्दी साहित्य में उन उपकरणों को नई प्रणालियों का समावेश किया गया [2]

एकांकी पूर्व रूप :-

युग के साथ साहित्य के रूप में परिवर्तन होते रहे हैं । एकांकी का जो रूप आज हमारे समक्ष प्रस्तुत है वह पहले नहीं था । विषय व आकार की दृष्टि से अनेक प्रकार के नाटकों की रचना संस्कृत साहित्य में हुई तथा आचार्यों ने उनका विवेचन बड़ी सूक्ष्मता व विस्तार से किया । विवेचनीय तथ्य यह है कि संस्कृत नाटकों के विभिन्न प्रकारों का जो वर्णन है वह बाह्य रूपरेखा के आधार पर नहीं बल्कि नाटक के सब तत्वों के आधार पर है ।

आचार्य धनंजय ने 'दशरूपक' में रूपक के दस भेद बतलाये हैं ।

नाटकं सप्रकरणं भाण : प्रहसनं डिम:
प्रायोग समवकारौ वीथ्यंकेहामृगा इति [3]

---

१. Principles of Literary Criticism by I.A.Richards.

२. एकांकी कला सम्पादक - डा. रामकुमार वर्मा - पृ सं. ३७

३. दशरूपक - धनंजय - श्लोक ८

अर्थात् भाण, प्रहसन , डिम, प्रायोग, नाटक, प्रकरण, समवकार, वीथी, अंक तथा ईहामृग ये दस भेद युक्त रसाश्रित नाट्य के होते थे । इनमें से पांच मौन, प्रहसन व्यायोग वीथी तथा अंक निश्चित रूप से एकांकी के हैं । ईहामृग के सम्बन्ध में मतभेद हैं । परन्तु साहित्य दर्पण के आधार पर डा. सत्येन्द्र लिखते हैं कि " विश्वनाथ के समय तक ईहामृग एक अंक का होने लगा था ।"[1] साहित्य दर्पण तथा दशरूपक के आधार पर संस्कृत एकांकी के विभिन्न प्रकारों का परिचय मिलता है ।[2]

१	नाटक	अभिज्ञान शाकुन्तल	कालिदास
२	प्रकरण	मालती माधव	भवभूति
३	प्रायोग	मध्यम प्रायोग	भास
४	भाण	कर्पूर चरित्र	वत्सराज
५	समवकार	समुद्र मंथन	,,
६	डिम	त्रिपुरदाह	वात्सराज
७	ईहामृग	रुक्मणि हरण	,,
८	अंक	शर्मिष्ठाययाति	हैमन्त बजाज
९	वीथी	मालविका अग्निमित्र	कालिदास
१०	प्रहसन	मत्त विलास	महेन्द्र विक्रम वर्मन
११	नाटिका	रत्नावली	हर्ष
१२	त्रोटक	विक्रमोर्वशी	कालिदास
१३	गोष्ठी	रैवतमदनिका	हैमन्त बजाज
१४	सट्टक	कर्पूर मंजरी	राजशेखर

---

१. हिन्दी एकांकी -- डा. सत्येन्द्र -- पृ सं. २८६

२. देखिए - हिन्दी नाटकों का उद्भव व विकास - दशरथ ओझा - पृ सं.

१५	प्रस्थान	श्रृंगार तिलक	लेखक अज्ञात
१६	उल्लाप्य	देवी महादेव	,, ,,
१७	काव्य	यादवोदय	,, ,,
१८	प्रेंखण	बालिवध	,, ,,
१९	रासक	मेनकाहित	,, ,,
२०	संलापक	माया कापालिक	,, ,,
२१	श्री गदित	क्रीडा रसातल	,, ,,
२२	शिल्पक	कनकावती माधव	,, ,,
२३	विलासिका	उदाहरण अप्राप्य	,, ,,
२४	दुर्मल्लिका	बिन्दुमती	,, ,,
२५	प्रकरणिका	उदाहरण अप्राप्य	,, ,,
२६	हल्लीश	केलिरैवतक	,, ,,
२७	भाणिका	कामदत्ता	,, ,,

उपरोक्त विवेचन से यह सिलसिला हो जाता है कि हमारे साहित्य में एकांकी नाटकों की प्राचीन परम्परा है । संस्कृत एकांकियों की शिल्प विधि अव्यक्त तथा अत्यन्त जटिल थी तथा नाट्यकारों ने उपभेदों का अन्तर स्पष्ट किया था । उपरोक्त एकांकियों के विभिन्न भेदों में अत्यन्त सूक्ष्म अन्तर हैं । पात्रों के चरित्र अभिनय प्रणाली रस, कथानक, वृत्त संधि तथा नृत्य आदि के आधार पर इनका नामकरण एवं विभाजन किया गया है । यद्यपि एकांकी की स्वतन्त्र सत्ता न थी परन्तु प्रयोगों की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण है ।

" प्राचीन काल में समस्याओं का निदान एकांकी में न मिला एकांकी प्रयोगों के रूप में ही रह गई । कदाचित संस्कृत भाषा की क्लिष्टता इसके मार्ग में बाधक हो उठी और यह एकांकी का जीवन ही नियोजित हो गया था ।[१] अब युग एकांकियों की

उपयोगिता को समझ न पाया और एकांकी बड़े नाटकों के अन्तर्गत अंक के आकार प्रकार और स्वभावमें तदरूप होने के कारण स्वतन्त्र अस्तित्व स्थापित न कर सका । नाटक पनपते रहे तथा एकांकियों की ओर नाटककारों की दृष्टि न गई । संस्कृत साहित्य में एकांकी नाटकों की रचना हुई अवश्य परंतु साहित्य शास्त्र में उनके स्वरूप विधान पर स्वतन्त्र रूप से विचार नहीं हुआ । [२] यही कारण है कि हम संस्कृत के छोटे-बड़े नाटकों में केवल शैली का भेद पाते हैं । उनमें केवल टेकनीक का अन्तर है, सिद्धान्त का अन्तर नहीं है । इसी कारण संस्कृत नाट्य साहित्य में एकांकी का मूल्यांकन नाटक के अन्तर्गत ही होता है । फलतः उसके उपलक्षक के नियम ही एकांकी पर लागू होते हैं ।

वस्तुतः हिन्दी साहित्य का उद्भव देशी भाषा के रूप में तेरहवीं शताब्दी से माना गया है । इसके पूर्ववर्ती साहित्य पर दृष्टिपात करें तो पाली व अपभ्रंश भाषाओं के रास साहित्य की प्रचुरता दृष्टिगत होती है । रास तीन प्रकार से विभाजित किया जाता है जिनमें लाट रास, ताण्डव रास तथा ताल रास प्रमुख हैं । राजस्थानी साहित्य में जो हिन्दी का आदिकालीन साहित्य प्रभावित हो चुका है दो प्रकार के नाटकों का विवेचन हुआ है । भावनगर से प्रकाशित ऐतिहासिक रास संग्रह नामक ग्रंथ में लघु नाटक व वृहत नाटक का विवेचन उपलब्ध होता है । वास्तव में साहित्यिक विधा के अनुसार ऐतिहासिक रास संग्रह ग्रन्थ ऐतिहासिक एकांकियों का संकलित रूप माना जा सकता है । उनमें यद्यपि मंगलाचरण, भरत वाक्य तथा आशीर्वाद जैसे तत्व परिलक्षित होते हैं तथापि घटना व कथावस्तु की दृष्टि से ये नाटकीय तत्वों से प्रथक पृथक माने जाते हैं । लघुत रास जो आज भी ग्रामीण क्षेत्रों पर अभिनीत किया जाता

---

१. हिन्दी एकांकी - उद्भव और विकास - डा. रामचरण महेन्द्र - पृ सं. १८

२. हिन्दी एकांकी की शिल्पविधि का विकास - डा. सिद्धनाथकुमार -,, ५४

है वह एकांकी का ही परिवर्तित रूप है । ये रास परम्परा अपभ्रंश से हिन्दी में, हिन्दी में अबाध गति से विकसित हुई है । लोक नाटक, यात्रा व रास नाटक एकांकी तत्वों पर ही आधारित हैं ।

अपभ्रंश से उद्भूत रास परम्परा ने ब्रज भाषा को प्रभावित किया जिसके फलस्वरूप भक्तिकालीन कृष्ण भक्ति शाखा के कवियों पर उस का प्रभाव पड़ा । गय सुकुमार रास अपभ्रंश मिश्रित राजस्थानी हिन्दी का प्रथम नाटक माना जा सकता है ।[1] यही रास सूक्ष्म अवलोकन पर ज्ञात होगा कि सफलता अभिनय एकांकी प्रमाणित होते हैं ।

मध्यकालीन भारतीय जन मानस में शृंगार व वीर रसप्लावित एकांकी जिनमें भरत बाहुबली रास नाटक एकांकी प्रसिद्ध है, छा गया था। यह एकांकी नाटक आधुनिक एकांकी के प्रमुख तत्वों से तब रंगमंचीय दृष्टिकोण से अभिनीत किया जाता था ।

कालान्तर में इसी रास परम्परा का प्रभाव जैन साहित्य व धर्म पर पड़ा । उदाहरणार्थ संघपति समरारास जो अंबदेव कवि द्वारा रचित है । इस पर पूर्व रास परम्परा का प्रभाव परिलक्षित होता है । प्राचीन पौराणिक नायकों को पात्र बना कर कई रास एकांकियों की रचना इस काल में हुई परन्तु आज उनका अस्तित्व नहीं प्राप्त है । इसका कारण राजस्थानी रास साहित्य पर साहित्यकारों की अनुसंधानात्मक व्याप्ति का न होना है । राजस्थान में रास व रासौ के अभिनय की परम्परा अक्षुण्ण रूप से चली आ रही है । गोपीचंद, भृतहरि, अमरसिंह राठौर एवं ढोला मरूण आदि ऐतिहासिक कथानकों के किसी एक पक्ष पर आज भी एकांकी रास नाटक अभिनीत किये जाते हैं ।

---

१. हिन्दी नाटक उद्भव व विकास - डा. दशरथ ओझा - पृ. सं. ८४

कालान्तर में वैष्णव धर्म के प्रचार के साथ साथ कृष्ण लीला को भी प्रसिद्धि प्राप्त हुई । आधुनिक एकांकी तत्वों के आधार पर कृष्ण लीला का विवेचन करने पर हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि ये लीलाएं एकांकी तत्वों से युक्त थी । कृष्ण-लीला की भांति रामलीला का भी एकांकी रूप में प्रदर्शन , उदाहरणार्थ भरत मिलाप शबरी की भक्ति जनता में खेला जाता है । कहने का तात्पर्य यह है कि ये एकांकी तत्वों से परिप्लावित लीलाएं भाषा की दृष्टि से काव्यमयी या पद्युक्त थीं पर शास्त्रीय दृष्टि से अर्थात् कथोपकथन संकलन त्रय आदि की दृष्टि से पूर्णतया एकांकीय थीं । इसी प्रकार एकांकीय तत्व युक्त कुछ प्रसंग नारद पंच रात्र नामक ग्रन्थ में उपलब्ध होते हैं ।

रासलीला नाटक रचना में भक्त कवि नंददास जी का महत्वपूर्ण योगदान है । उन्होंने एक ही कथावस्तु को संगीत कथा तथा दृश्य काव्य में बड़ी कुशलता से समन्वयात्मक रूप में प्रस्तुत किया है । सूक्ष्म विवेचन से ज्ञात होगा कि सूरदास के प्रत्येक मुक्तक पद की पृथक कथा है, जो एकांकी का गीति काव्यात्मक रूप माना जा सकता है । बाबा वृन्दावनदास जी सरस, सरल व माधुर्य युक्त भाषा में चालीस लीलाओं का वर्णन किया है, जो एकांकी का पद्यमय रूप है, जैसे गौनेहारी लीला, चितेरिन लीला तथा सुनारिन लीला आदि । सारांश यह है कि ये समस्त पद जीवन की एक झलक मात्र प्रस्तुत करते हैं तथा आधुनिक एकांकी के प्रमुख तत्व संकलनत्रय का निर्वाह इसमें पूर्ण रूप से होता है, यही एक मात्र है, जिसके कारण हम इन्हें गीतिकाव्यमय एकांकी मानने को बाध्य हैं ।

डा. रामचरण महेन्द्र के शब्दों में " भारतीय लोकनाट्य की शैलियों में हमें हिन्दी एकांकी के पूर्वज उपलब्ध हो सकते हैं । सामान्य रूप से इन सभी में एक संक्षिप्त

कथानक या घटना का विधान, कथोपकथन रंगमंच अभिनय रंगमंच निर्देशन आदि एकांकी नाटक के तत्व अविकसित रूप में मिल जाते हैं । यद्यपि उनमें संकलनत्रय चरित्र चित्रण की सूक्ष्मता और उद्देश्य के प्रति सजगता नहीं है ।[१]

रीतिकाल के प्रमुख आचार्य केशवदास जी की विज्ञानगीता नामक पुस्तक में नाटकीय तत्व परिलक्षित होते हैं । इस पर संस्कृत नाटकों का स्पष्ट रूप से प्रभाव पड़ा है । संवादों की दृष्टि से विज्ञान गीता का रूप एकांकी के अधिक निकट है । रीतिकालीन काव्य में कथोपकथन तथा स्थल चित्रण आधुनिक संकलनत्रय की छाया से प्रभावित प्रतीत होते हैं । केशव के समान पद्माकर, सेनापति, श्रीपति, कुलपति मिश्र आदि के काव्य का प्रत्येक घटना वर्णन नाटक के एक प्रथम अंक सा प्रतीत होता है । उदाहरणार्थ पद्माकर का कृष्ण की होली लीला एकांकी तत्वों का समर्थन करती है । महाकवि भूषण ने शिवाबावनी में इतिहास प्रसिद्ध शिवाजी के जीवनवृत्त को पृथक-पृथक घटनाओं में चित्रित कर आधुनिक एकांकी तत्वों को परिष्कृत एवं परिमार्जित किया है । यद्यपि बिहारी ने स्वतन्त्र पदों की रचना नहीं की है तथापि उनका प्रत्येक एक दोहा जीवन के आंशिक वर्णन को प्रस्तुत करने में सक्षम व समर्थ है ।

किन्नर हौ नररूप विचच्छन जच्छ कि स्वच्छ सरीर सोहौ ।
चित चकोर के चंद किधौं मृगलोचन चारु बिमान न रोहौ ।।
अंग धरे कि अनंग हौ केसव अंगी अनेकन के मन मोहौ ।
बीर जटान धरे धनुबान लिये बनिता बन में तुम को हौ ।।

\- केशवदास -

सीस मुकुट कटि काछनी, कर मुरली उर माल ।
इहि बानक मो मन सदा बसौ बिहारी लाल ।।

\- बिहारी -

---

१. हिन्दी एकांकी उद्भव और विकास - डा. रामचरण महेन्द्र - पृ.सं.११

इनके अतिरिक्त रीतिकालीन कुछ अन्य भक्त कवियों ने भी राधाकृष्ण के जीवनवृत को अपने काव्य का माध्यम बना कर जीवन का आंशिक स्पष्ट एवं उज्ज्वल रूप प्रस्तुत किया है ।

लाजनि लपेटी चितवनि भेद भाय भरी
लसति ललित लोल चरण तिरछानि में
छवि को सदन गोरो बदन रुचिर भाल
रस निचुरत मीठी मृदु मुसक्यानि में
दसन दमक फैली हिये मोती माल होत
पिय सौं लड़कि प्रेम पगी बतरानि में
आनंद की निधि जगमगाति छबीली बाल
अंगनि अनंग रंग ढुरि मुरझानि में ।।

* घनानंद *

घनानन्द ने अनेक छोटी-छोटी कृतियों का निर्माण किया । जिसमें कृष्ण के लीला संबंधी विभिन्न पक्षों का नाटकीय रूप प्राप्त होता है । गोकुल विनोद गिरि-पूजन ब्रज व्यवहार आदि ऐसी अनेक रचनाएं हैं जो कृष्ण के जीवन की पृथक पृथक घटनाओं का वर्णन प्रस्तुत कर उनके जीवन के एक अंग का स्वरूप प्रस्तुत करती है । गिरी पूजन का वर्णन व संवाद एकांकी के कथोपकथन की शैली से सामंजस्य रखता है ।

यद्यपि रसखान ने प्रेम वाटिका जैसा प्रबन्ध काव्य रचा तथापि कृष्ण कन्हैया के नटखटी व व्यवहारों का वर्णन भी उन्होंने सवैया नामक छन्दों में बड़े अत्यन्त कुशलता से प्रस्तुत किया है । रसखान का प्रत्येक सवैया प्रकृति व जीवन के एक पक्ष का वर्णन प्रस्तुत करता है । इनमें जहां रसाधिक्य का प्राबल्य है वहां वातावरण की सजीवता भी अनूठी है । स्थान समय व कार्य का अनुपम समन्वय उनके प्रत्येक सवैये में दृष्टव्य है ।

बोधा व ठाकुर जैसे रीतिमुक्त कवियों ने भी कृष्ण की प्रेमलीला और उनके वृन्दावन की कुंज गलियों का शाब्दिक चित्रण काव्य में प्रस्तुत किया है। जिसे पढ़ते ही तत्कालीन ब्रज के प्रत्येक स्थान का चित्र हृदय पटल पर सहसा उभर आता है। ठाकुर का प्रकृति वर्णन हिन्दी साहित्य की अमूल्य देन है। उन्होंने जहां वसन्त ऋतु में कूकती कोयल का वर्णन किया है, वहां होली में उड़ते गुलाल व सतरंगी चुनरियों पर रंग डालती पिचकारियों का भी सजीव वर्णन किया है। उनका पावस ऋतु का वर्णन जिसमें चातक की पुकार, मयूरों का नृत्य, बगुलों की उड़ान बिजली की चमक, कृषकों का हर्ष तथा भूमि पर रेंगते हुए कीटाणुओं का ऐसा अद्भुत व अलौकिक चित्रण किया है जिसे देखकर प्रकृति का वैभव का सजीव आभास होता है। एकांकी के तत्व वातावरण की दृष्टि से ठाकुर का पावस वर्णन अत्यन्त मनोरम है --

कारे कारे बादल सुहाये कहं सेते सेत
कहूं लाल लाल कहं आभा पीरी पीरी री
ज्यों ज्यों होत चपल दिखात चंचला की कौंध
त्यों त्यों घन की घुमार होत धीरी धीरी री

" ठाकुर "

हिन्दी के मुसलमान कवियों में आलम का प्रेम वर्णन बोधा के समान तीव्र व आवेशमय है। उन्होंने भी, "कथा संस्कृत सुठनि कछु थोरी भाषा बांधी चोप की जोरी " में अपने काव्य के विषय कृष्ण गोपी कामदेव आदि का वर्णन किया है। आलम की कथावस्तु में जहां लौकिक दृश्यों का वर्णन अनुपम रूप से किया गया है वहां अलौकिक लीलाओं का भी वर्णन कुशलतापूर्वक किया गया है। आलम के युद्ध खंड, दूत खंड आदि आधुनिक एकांकी तत्वों से परिप्लावित हैं। विशेष रूप से बालखण्ड तथा शृंगार खण्ड आदि वर्णन नाटकीयता की विशेषताओं का आगार है।

इनके अतिरिक्त सूफी कवियों के काव्य में लौकिक गाथाओं का स्थान स्थान

पर सुन्दर निर्देश किया गया है । सूफी काव्य में ऐतिहासिक कथा व कल्पना का सुन्दर समन्वय दृष्टिगोचर होता है । वास्तव में जहां इनके काव्य में प्रेम की तीव्र उत्कंठा है, वहां दृश्यांकन की सजीवता नाटकीय तत्व प्रस्तुत करती है । विरह वर्णन में अभिनय तत्व का विलक्षण रूप चित्रित हुआ है ।

कुतुबन के काव्य मृगावती में यद्यपि प्रबन्ध काव्य के तत्व उपलब्ध होते हैं तथापि प्रत्येक अध्याय का वर्णन स्वतन्त्र रूप से किया गया है । मंझन की मधुमालती घटना वर्णन तथा नाटकीय सामंजस्य की दृष्टि से एकांकीय है । घटना प्रधान काव्य होने के कारण स्थान तथा कार्य का वर्णन अपूर्व कहा जा सकता है ।

जायसी की परम्परा में उस्मान तथा नूर मोहम्मद का नाम अग्रगण्य है । इनके काव्य में प्रेम की पीड़ा के साथ मिलन की आकुलता है । षटऋतुओं का वर्णन अपनी अभिव्यक्ति स्वयं करता सा प्रतीत होता है । इनके काव्य का प्रत्येक खण्ड एकांकीय तत्वों से युक्त है । कुंवर ढूंढन खण्ड तो भौगोलिक वातावरण की यथार्थ प्रस्तावना उपस्थित करता है । नूर मुहम्मद ने तत्कालीन राजनीतिक अवस्थाओं, प्रेम प्रपंचों, विरह पीड़ा, अभिसार आदि का लौकिक-वर्णन अनूठे ढंग से प्रस्तुत किया है । यद्यपि काव्य की दृष्टि से ये वर्णन रहस्यवाद की कोटि में आते हैं, परन्तु मौन अभिनय की दृष्टि से इनका रंगमंचीय वातावरण विशुद्ध नाटकीयता प्रस्तुत करता है ।

यों तो क्रमानुसार वैदिक काल से ही प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में हिन्दी अथवा संस्कृत में एकांकी का विकास क्रम चल ही रहा था । परन्तु नाट्य साहित्य के प्रभाव से आधुनिक ढंग से हिन्दी एकांकी का विकास इसी युग की देन है । बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक के अन्त में पश्चिम के अनुकरण पर हमारे साहित्य में नई शैली के एकांकियों का आरम्भ हुआ, जिस टेक्नीक नये हिन्दी एकांकी लिखे गये वैसे पहले हमारे यहां नहीं थे ।

आधुनिक एकांकी :--

आधुनिक हिन्दी एकांकी का आरम्भ किस एकांकी से हुआ इस प्रश्न पर विद्वानों में परस्पर मतभेद है। विद्वानों का एक वर्ग १९२९ में लिखित जयशंकरप्रसाद के " एक घूंट " को आधुनिक शैली का पहला एकांकी कहते हैं। विद्वानों का द्वितीय वर्ग १९३० में " विश्वामित्र " में प्रकाशित डा रामकुमार वर्मा के " बादल की मृत्यु " एकांकी को प्रथम एकांकी का स्थान देते हैं। विद्वानों का तृतीय वर्ग भुवनेश्वरप्रसाद के " कारवां में संकलित नाटकों को प्रथम एकांकी संग्रह का श्रेय देते हैं।

आधुनिक एकांकीकारों को में हम सर्व प्रथम आलोच्य एकांकीकार डा. रामकुमार वर्मा को लेंगे। वर्मा जी को सर्वाधिक सफलता ऐतिहासिक आदर्शवादी एकांकी लिखने में प्राप्त हुई है। इस क्षेत्र में वे अद्वितीय है। उनके प्रसिद्ध एकांकी संग्रह पृथ्वीराज की आंखें " चारुमित्रा" रेशमी टाई" ऋतुराज " दीपदान , आदि हैं। जो ऐतिहासिक अधिक व सामाजिक कम है। १

उदयशंकर भट्ट के सामाजिक एकांकियों में उस खोखलेपन, दुराभिमान व उस पाखण्ड का चित्र खींचा गया है जिनसे हमारे राष्ट्रीय व सांस्कृतिक पतन के बुनियादी कारणों पर प्रकाश पड़ते है। भट्टजी मूलत: यथार्थवादी दृष्टिकोण लिए हुए हैं। भट्ट जी का एकांकी साहित्य सामाजिक आलोचना राष्ट्रीय जागरण तथा सांस्कृतिक पुनरोत्थान से संबंधित हैं। उनके एकांकी साहित्य, अभिनव एकांकी " कालिदास, विश्वामित्र और भावनाट्य तथा जीवन और संघर्ष आदि।

आधुनिक काल मे ऐतिहासिक एकांकियों के क्षेत्र को सबसे अधिक समृद्ध सेठ गोविन्ददास ने किया है। ऐतिहासिक व पौराणिक एकांकी नाटकों के क्षेत्र में आप भारतीय संस्कृति के उपासक के रूप में प्रकट हुए है। सांस्कृतिक दृष्टिकोण से आप अतीत

---

१. विस्तार के लिए - देखिए - तृतीय अध्याय।

से वर्तमान की ओर आते प्रतीत होते हैं । अपनी ऐतिहासिक नैतिक विचारधारा में प्रसाद जी की भांति आप आर्य संस्कृति पर निर्भर आधुनिक एकांकीकार हैं । अपने ऐतिहासिक एकांकियों द्वारा आपने हमारा ध्यान प्राचीन भारतीय गौरव चरित्र की दृढ़ता, उत्कर्ष तथा उत्कृष्टता की ओर आकृष्ट किया है । आपके ऐतिहासिक एकांकी हैं - बुद्ध की एक शिष्या, चैतन्य का सन्यास, शिवाजी का सच्चा स्वरूप, बाजीराव की तस्वीर, आदि । सारांश यह है कि सेठजी ने अपने ऐतिहासिक एकांकियों में भारतीय इतिहास का कोना-कोना फांका व चित्रित किया है ।

हिन्दी एकांकी के नवोत्थान में भुवनेश्वर प्रसाद ने पाश्चात्य भावों तथा टैक्नीक को अपने एकांकियों के माध्यम से प्रकट किया है । इतिहास की केंचुल नामक एकांकी से भुवनेश्वर की प्रवृत्ति ऐतिहासिक नाटक व एकांकी की ओर बढ़ती गई तथा इसी विचारधारा से प्रभावित हो आपने कुछ और ऐतिहासिक नाटक व एकांकी रचे है। आजादी की नींद, इसी का फल है । इसके पश्चात् आपने " जेरूसिलम नामक एकांकी नाटक की रचना की जिससे महात्मा ईसा के चरित्र गौरव की प्रतिष्ठा हुई । इसकी विशेषता उन्नत वातावरण व रंगमंचीय होना है । ऐतिहासिक एकांकियों के क्षेत्र में भुवनेश्वर ने कुछ और कलात्मक प्रयोग किए । "सिकन्दर" अकबर "मौज़ा" तथा आपकी नवीनतम कृति सीकों की गाड़ी है ।

जगदीशचन्द्र माथुर कृत कलिंग विजय" शारदीयां, तथा भोर का तारा " सांस्कृतिक वातावरण तथा ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से ओत प्रोत है । शारदीया की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि ग्रान्ट डफ के मराठा इतिहास से ली गई है । ऐतिहासिक एकांकियों की शैली भाषा तथा टैक्नीक विषयों की गुरु गंभीरता के उपयुक्त ऊंची उठी है ।

श्री गिरिजाकुमार माथुर के ऐतिहासिक एकांकियों का क्रम सिराजुद्दौला की रचना से आरम्भ हुआ था । ऐतिहासिक एकांकियों में आपके द्वारा रचित विक्रमादित्य विजयपान, वासवदत्ता, तथा क्रांतिपथ , प्रमुख हैं । भारतीय संस्कृति की मुक्त आत्मा

को युग-युग की तमिस्त्रा में आलोकमय पथ बनाती चली आ रही है, वेदों की कल्याण कामना से लेकर सन सत्तावन की क्रान्ति तथा जनतंत्र के संघर्ष तक उनमें चित्रित की गई है।

राम भक्ति से संबंधित पौराणिक नैतिक चेतना को मुखरित करने वाली धारा के अन्तर्गत श्री संमुदयाल सक्सेना प्रमुख एकांकीकार हैं। रामायण के भावपूर्ण स्थलों को आपने अपने एकांकियों में गूंथा है।" पर्णकुटी, तपोवन तथा आदर्श मुक्ति का दर्शन आदि आपके प्रमुख एकांकी है।

श्री चतुरसेन शास्त्री के एकांकियों का मूलतत्व रसोदय है। आपने अपने एकांकी साहित्य का प्रादुर्भाव ऐतिहासिक एकांकियों से कीया है। उनमें रंग सूचनाएं कम है, कथोपकथन तथा दृश्य अधिक। विधवा" सिंहनी, क्षत्रिय पुत्री, वीरवधू, कला-कल से सुहाग, स्वयंवरा बाला आदि आपके ऐतिहासिक एकांकी हैं, जिनमें राजपूत रम-णियों के चरित्र गौरव वीरता तथा दृढता का चित्रण है। देश में नवीन जागृति व नव निर्माण की दृष्टि से ऐतिहासिक आधार के साथ राष्ट्रीयता की भावना का सूक्ष्म चित्रण किया गया है।

लक्ष्मीनारायण लाल उन एकांकीकारों में हैं जो जीवन की आलोचना बुद्धि विकास से नहीं प्रत्युत भावना के माध्यम से करते हैं। आपके साहित्य की महत्ता ऐति-हासिक जीवन को मूर्तिमान कर देने में है। आपके एकांकियों में मुगलकालीन जन जीवन सजग व सजीव हो उठा है। आपने ऐतिहासिक एकांकियों में कथानक की कमी की पूर्ति भावना व कल्पना के द्वारा की गई है। उर्वशी, महाकाल का मंदिर नूरजहां की एक रात, जहांआरा का स्वप्न" ताजमहल के आंसू, आपके प्रसिद्ध एकांकी हैं।

इन प्रमुख ऐतिहासिक एकांकीकारों के अतिरिक्त विनोद रस्तोगी कृत पुरुष का पाप, पत्नी परित्याग, साम्राज्य व सौतन, दो चांद, प्यार और व्यवसाय प्यास आदि ऐतिहासिक एकांकी हैं। गोविन्द शर्मा कृत टीपू सुल्तान भी ऐतिहासिक

पृष्ठभूमि पर आधारित एकांकी है । महेन्द्र भटनागर का " श्रीमूतबाहन " बौद्धकालीन इतिहासकार पर आधारित एकांकी है ।

आधुनिक एकांकी - परिभाषा :--

आधुनिक हिन्दी साहित्य में एकांकी के तत्वों और विशेषताओं पर विस्तार से विचार किया गया है यद्यपि यह नहीं कहा जा सकता कि वह विवेचन बहुत सुलझा व बहुत स्पष्ट है । सद्गुरु शरण अवस्थी ने एकांकी संबंधी अपना मत इस प्रकार किया है, एकांकी नाटक के वेग के सम्पन्न प्रवाह में किसी प्रकार के अन्तर प्रवाह के लिए स्थान नहीं होता । वह तो समूचा ही केन्द्रीभूत आकर्षण होता है । उसके रूप में प्रमुता और उत्कर्षता सदैव ही बिखरी रहती है । - - - - आकार का केन्द्रीकृत प्रभाव तथा व्यक्तित्व तथा सामाजिक विशेषताओं की केवलता एकांकी नाटकों को कहीं अधिक सुन्दर बना देती है । [१]

"सेठ गोविन्ददास एकांकी संबंधी अपना मत इस प्रकार व्यक्त किया है, उपन्यास और कहानी की लेखन पद्धति में जो अन्तर है वही फर्क पूरे नाटक और एकांकी की लेखन पद्धति में है । [२]

डा. रामकुमार वर्मा ने एकांकी के सम्बन्ध में अपने विचार इन शब्दों में प्रकट किए हैं । एकांकी नाटकों में अन्य प्रकार के नाटकों से विशेषता होती है । उसमें एक ही घटना होती है, और वह घटना नाटकीय कौशल से ही कुतूहल का संचय करती हुई चरम सीमा तक पहुंचती है । उसमें कोई अप्रधान प्रसंग नहीं होता । एक एक वाक्य तथा एक एक शब्द प्राण की रखती है - - - - चरम सीमा के बाद एकांकी नाटक की

---

१. भूमिका : लेखक - सद्गुरुशरण अवस्थी - भूमिका

२.

समाप्ति हो जानी चाहिए नहीं तो समस्त कथानक फीका पड़ जाता है । मेरे सामने एकांकी नाटक की भावना वैसे ही है जैसे एक तितली फूल पर बैठ कर उड़ जाए । १

डा. नगेन्द्र के विचारों में एकांकी में हमें जीवन का क्रमबद्ध विवेचन न मिल कर उसके एक पहलू एक महत्व पूर्ण घटना एक विशेष परिस्थिति अथवा एक उद्दीप्त क्षण का चित्र मिलेगा, उसके लिए एकता अथवा एकाग्रता अनिवार्य है - किसी प्रकार का वस्तु विभेद उसे सह्य नहीं । एकाग्रता में आकस्मिकता की झकझोर अपने आप आ जाती है और उस झकझोर से चरम सीमा में स्पन्दन पैदा हो जाती है ।

हिन्दी साहित्य में एकांकी के जन्म व उसकी लोक प्रियता के कारण निम्न लिखित है :-

(अ) हमारी अथवा अभिव्यक्त अभिरुचि ।

(आ) किसी ऐक ही ओर अपने ध्यान को निरंतर केन्द्रित किए रह सकने वाली शक्ति और इच्छा शक्ति का सामान्यत: ह्रास

(इ) संस्कृत अंग्रेजी और बंगला साहित्य एवं उनके एकांकी साहित्य से हमारा परिचय व उनके अनुकरण पर एकांकी लिखने की हमारी इच्छा का जन्म ।

(ई) हिन्दी नाट्य साहित्य के प्रणयन से पूर्व हिन्दी जनता का जो अपना रंगमंच था उस पर अभिनीत होने वाली कृष्ण चरित्र संबंधी एकांकी झांकियां ।

(उ) कभी कभी थोड़े समय के लिए खाली होने पर उतने थोड़े समय के लिए साहित्यिक मनोरंजन की हमारी मांग

---

१. एकांकी कला - डा. रामकुमार वर्मा - पृ.सं. ४१ ,४२

२. आधुनिक हिन्दी नाटक - लेखक - डा नगेन्द्र - पृ सं. १५०

(ऊ) बालचरों के कैम्प फायर के आवश्यक सरल एकांकी की मांग ।

(ए) रेडियों से हिन्दी एकांकियों की मांग । [१]

एकांकी व नाटक :-

एकांकी का नाटक में वही सम्बन्ध है जो कहानी का उपन्यास से अथवा गीति काव्य का महाकाव्य से । नाटक का उद्देश्य जीवन का विस्तार, लम्बाई तथा परिधि का विस्तार है, क्षेत्र जीवन की भांति विस्तृत है । परन्तु एकांकी का क्षेत्र सीमित है, परिधि संकुचित है तथा जीवन का एक पहलू ही चित्रित करने का प्रयत्न रखता है ।" एक समुद्र की भांति दीर्घ है, दूसरा बिन्दु की भांति संक्षिप्त ।" [२] नाटककार अवकाश के क्षण चाहता है, जिनमें वह मानव जीवन की जटिल समस्याएं प्रस्तुत कर सके । एकांकी अल्पकाल में मानव जीवन की एक झांकी मात्र ही दे देता है। वह किसी विशेष पहलू पर प्रकाश डालता है । नाटक में जीवन की बहुरूपता अनेक रूपता तथा घटना बाहुल्य रहता है । एकांकी में एक रूपता, एक समस्या, एक पहलू या जीवन का एक उद्दीप्त क्षण । एकांकी में मितव्ययता और संक्षिप्तता का महत्व है । एकांकी के कथानक सरस, सरल होते हैं, उनमें सूक्ष्मता, एकता तथा एकाग्रता अनिवार्य है । नाटक में कथानक जटिल होता है तथा छोटी सहायक घटनाओं को स्थान प्राप्त हो जाता है । एकांकी में केवल एक ही घटना एक ही महत्व पूर्ण पहलू या परिस्थिति रह जाती है । नाटक में प्राय: नाटक के चारों भाग स्पष्ट रहते हैं, एकांकी का प्राय: संघर्ष स्थल से आरम्भ होता है और शीघ्र ही गति पकड़कर चरम सीमा की और अग्रसर होती है । नाटक की गति धीमी तथा एकांकी में वेग सम्पन्न प्रवाह का महत्व है ।

---

१. भारतीय नाट्य साहित्य - सम्पादक - डा. नगेन्द्र - पृ. सं. ३७६

२. हिन्दी एकांकी : उद्भव व विकास - डा. रामचरण महेन्द्र - पृ सं. ३७

एकांकी का प्राण कथोपकथन है । नाटक में घटनाओं की व्यंजना, विस्तृत चरित्र चित्रण, विस्तृत कार्य व्यापार, अधिक समय तथा बड़े रंगमंच की आवश्यकता होती है, किन्तु एकांकी में छोटे पैमाने पर ये कार्य सम्पन्न किये जा सकते हैं । नाटक में कथोपकथन लम्बे, विवेचन प्रधान तथा स्वगत से परिपूर्ण हो सकते हैं, किन्तु एकांकी का कथोपकथन संक्षिप्त मर्मस्पर्शी तथा चारित्रिक विशेषताएं प्रकट करने वाला होता है । इन्हीं की सहायता से कथानक का विकास परिस्थिति तथा वातावरण का विकास होता है । एकांकी में स्वगत का स्थान नगण्य है । बड़े नाटकों में पात्रों की संख्या यथेष्ट रहती है, मुख्य पात्रों के साथ गौण पात्र भी अपना महत्व रखते हैं । एकांकी में पात्रों कम से कम रखे जाते है । बड़े नाटक व एकांकियों का शिल्प भिन्न होता है ।

एकांकी व कहानी :--

एकांकी नाटक का कुछ साम्य कहानी से दिखाई पड़ता है, दोनों के रूप कथात्मक है । दोनों के कथानक, पात्र, संलाप आदि उपकरण समान रूप से आते हैं । कुछ लोगों को इन दोनों के स्वरूप विधानों में इतना साम्य ज्ञात होता है कि वे इन दोनों को एक ही मान लेते है । उनमें कोई अन्तर ही नहीं देखते ।

चन्द्रगुप्त विद्यालंकार कहते हैं " संसार के अनेक साहित्यिक आलोचकों के अनुसार एकांकी नाटक, कहानी का रंगमंच पर खेला जाने वाला संस्करण मात्र है ।" १

प्रभाकर माचवे का कथन है," कहानी बहुत कुछ एकांकी के समान होती है ।[२] दुर्गाशंकर मिश्र का कथन है" नाटक की अपेक्षा कहानी एकांकियों के अधिक निकट जान पड़ती है तथा यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि नाट्य साहित्य में जो स्थान एकांकी

---

१. हंस एकांकी विशेषांक - मई १९३८
२. संतुलन लेख - प्रभाकर माचवे - पृ. सं. १६८

नाटकों को दिया जाता है वही कथा साहित्य में कहानी का है ।" १

डा. रामकुमार वर्मा ने एकांकी व कहानी में पांच विभिन्नताओं का उल्लेख किया है - कहानी व एकांकी में सर्व प्रथम भेद है श्रोव्य की भिन्नता --- कहानी का निर्माण पढने के लिए होता है , रंगमंच के लिए नहीं - - - - - कहानी लेखक लिखते समय पाठकों का ही ध्यान रखता है उसके विपरीत एकांकीकार रंगमंच तथा पाठक दोनों का ध्यान रखता है - - - - कहानी में लेखक का व्यक्तित्व प्रकट रहता है, एकांकी में लेखक का व्यक्तित्व अप्रकट रहता है तथा अंतिम अन्तर यह है कि कहानी लेखक कहानी में घटना तथा चरित्र-चित्रण में से केवल एक का ही ध्यान रखता है और एकांकी लेखक चरित्र चित्रण तथा घटनाओं का एक साथ ही ध्यान रखता है । २

एकांकी मूलत: दृश्यत्व के कारण ही कहानी से भिन्न है । पाश्चात्य विद्वानों ने कथात्मकता तथा नाटकीयता के बीच विभेद रेखा खींचने का प्रयत्न अपनी अपनी दृष्टियों से किया है तथा उसीके आधार पर नाटक को परिभाषित किया है । ~~क्या-उसीके-समान~~ एकांकी नाटक तथा कहानी दो भिन्न स्वतन्त्र विधान हैं क्योंकि एकांकी व कहानी के संगठन में भी अन्तर होता है । एकांकी में मनुष्यों के कार्य व्यापारों को ही विषय बनाया जाता है क्योंकि रंगमंच पर मनुष्य ही अभिनय करते हैं , परन्तु कहानी के लिए ऐसा कोई बंधन नहीं । नाटक के लिए किसी न किसी प्रकार का संघर्ष, द्वन्द्व अथवा संक्रांति अनिवार्य है, कहानी में भी इन तत्वों का समावेश हो सकता है । परन्तु यह अनिवार्य नहीं । जैसे नाटक उपन्यासका रंगमंचीय संस्करण मात्र नहीं, वैसे ही कहानी का एकांकी अभिनय संस्करण मात्र नहीं । ३

---

१. कहानी कला की आधार शिलायें - दुर्गाशंकर मित्र , पृ. सं, ३१

२. एकांकी कला - सम्पादक - डा. रामकुमार वर्मा - पृ.सं. ५१-५२

३. हिन्दी एकांकी शिल्प विधि का विकास - डा. शिवनारायणकुमार - पृ.सं. ३७

एकांकी तत्व एवं रचना प्रक्रिया :-

इस प्रकार स्वरूप के ऐतिहासिक विकास आवश्यकता तथा प्रयोग की दृष्टि से स्पष्ट है कि एकांकी नाट्य साहित्य का वह प्रधान नाट्य रूप है जिसके माध्यम से मानव जीवन के किसी ऐसे एक पक्ष, एक चरित्र, एक कार्य, एक परिपार्श्व, एक भाव की ऐसी कलात्मक व्यंजना की जाती है कि वे एक अविकल भाव से अनेक की सहानुभूति और आत्मीयता प्राप्त कर लेते हैं।

कलेवर की दृष्टि से एकांकी एक अंक का नाटक है, किन्तु दृश्य विधान के अनुसार इसके दो भेद किये जा सकते हैं - पहला एक दृश्य का एकांकी, दूसरा अनेक दृश्यों का एकांकी।[१] पहली श्रेणी के एकांकी में घटना कथा किसी मार्मिक घटना के मार्मिक स्थल से आरम्भ होती है तथा भावी घटनाओं के अवरोध से जिज्ञासा तथा कुतूहल की वृद्धि करती हुई तीव्र गति से विस्मयपूर्ण संक्रमण बिन्दु तक पहुंच जाती है। इसमें कथा का प्रवाह उस निर्झर के समान होता है जो किसी पहाड़ी से अकस्मात फूटता है और दूर तक दिखाई पड़ता है और शीघ्र ही आंखों से ओझल हो जाता है।[२]

इस प्रकार एकांकियों में एक ही स्थान पर एक ही समय में कार्य सम्पन्न हो जाता है तथा संकलनत्रय का पूर्ण निर्वाह रहता है। दूसरी श्रेणी के एकांकियों में पटुता या विचित्रता उत्पन्न करने का प्रयत्न किया जाता है जिसके फलस्वरूप दो या दो से अधिक दृश्यों की योजना करनी पड़ती है। इस प्रकार के एकांकियों में संकलनत्रय का निर्वाह नहीं हो पाता। इसमें कथा की धारा भू प्रदेश की प्रवाहशीला-विस्तृत भूलवर्ती सरिता के सदृश होती है जो ऋजु या वक्र गति से अग्रगामी होकर उद्देश्य सिन्धु

---

१. हिन्दी साहित्य कोष - सम्पादक - डा. धीरेन्द्र वर्मा - पृ.सं. १६६

२. ,, ,, ,, ,, १७०

से मिल जाती है । ऐसे एकांकियों में चरम बिन्दु की उत्कटता नहीं होती । उनमें किसी समस्या को उत्पन्न करने या उसका उद्घाटन करने में भी एकांकी की सफलता मानी जाती है ।

मर्यादा की दृष्टि से एकांकी में केवल आधिकारिक कथा होती है, कहीं आरम्भ होकर अन्त की ओर तीव्र गति से विकास करती है । इस लिए इसमें जटिलता नहीं होती है । इसमें किसी सुनिश्चित ध्येय की व्यंजना अल्पतम शब्दों में, संतुलन तथा मितव्ययिता के साथ की जाती है । इसमें बाह्य तथा अन्त: संघर्ष भी रहता है,जो परिस्थिति या वातावरण के अनुसार उद्दीप्त होकर कथा के विकास में सहायता देता है । इसमें प्राय: एक मुख्य घटना अनेक लघु घटनाओं के सहारे आगे बढ़ती है तथा कौतुहल के नये-नये स्थल उत्पन्न करती जाती है । इसमें काल व स्थान की एकता अनिवार्य नहीं मानी जाती किन्तु विकल्प से शिल्प कौशल के द्वारा स्थल ,कार्य, काल का उचित संकलन उपस्थित किया जाता है ।

यद्यपि गीति व एकांकी दो भिन्न रूप है किन्तु आज गीति नाट्य के विकसित हो जाने से एकांकी गीति के निकट आ गया है । गीति, गीतिकार की किसी अनुभूति की अभिव्यक्ति है , किसी राग को वाणी देना है जबकि एकांकी की आत्मा अनुभव, अनुभूति और विचार से किसी रहस्य का उद्घाटन कर राग को व्याप्ति देना है । एक में भाव की व्यंजना, एकता, अन्तरात्मा की स्फूर्ति,संगीतात्मकता शैली व भाव सौन्दर्य है, दूसरे में कृत्रिमता, विचार का चित्रण व व्यंजन, पात्रों का वाणी विकास, शैली में आंगिक, वाचिक, सात्विक, आहार्य अभिनय व रंग व्यवस्था है ।

एकांकी के कथानकचयन में एकांकीकार की अन्त प्रेरणा ही प्रमुख है ,वह अपने स्वभाव, रुचि, अरुचि और जीवन दर्शन के अनुसार किसी भी क्षेत्र के कथानक के विषय में उपादान चुनने के लिए स्वतन्त्र है । किन्तु एकांकी के कथानक का विस्तार

अनेकांकी नाटकों के समान नहीं होता । उसमें कथानक को इस कौशल से संवार कर कथा-वस्तु का संगठन किया जाता है कि उसमें एकाग्रता, उत्तेजना, सावधानता तथा उद्देश्यों-न्मुखता आ जाती है । वस्तु की यह संगठन क्रिया कुछ नहीं होती । उसमें कार्य का आरम्भ व प्रयत्न दो ही अवस्थाएं होती हैं तथा प्राप्त्याशा से कार्य की समाप्ति हो जाती है । इस प्रकार मुख व प्रतिमुख सन्धियों के बीच इन दोनों अवस्थाओं के कार्य के बीज का वपन कर दिया जाता है जो तैल बिन्दु का शीघ्र प्रसार पाकर प्रत्याशित या अप्रत्याशित अवरोधों के रहते हुए भी आश्चर्य जिज्ञासा, कौतूहल और विस्मय की स्थितियां उत्पन्न करता है और तीव्र वेग के साथ लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है । यह लक्ष्य पात्रों की परिस्थिति अथवा चरित्र की गति के अनुसार सुखान्त या दुखान्त होता है ।

प्राय: एक दृश्य के एकांकी में घटनाएं का आकस्मिक चरम उत्कर्ष पर पहुंच जा जाता है और उसमें कार्यारम्भ चरम की स्थिति से कुछ ही पूर्व की स्थिति का होता है । इस लिए एकांकी के कार्यारम्भ और कार्यान्त में कुछ ही दूरी का अन्तर रहता है ।

पात्र विधान के सम्बन्ध में पहली बात यह है कि एकांकी में उनकी संख्या चार या पांच से अधिक नहीं होती । उनमें केवल मुख्य अन्तर गौण प्रकार के पात्र रखे जा सकते हैं । साहस, वीरता व प्रेम की कहानी में नायक के साथ प्रतिनायक की कल्पना भी एकांकी को प्रभावशाली बना देती है । पात्रों के चरित्र का निर्माण में उनके संस्कार मनोविज्ञान व वातावरण के अनुकूल होता है । उनमें अन्तर्द्वन्द्व उपस्थित करते समय एकांकीकार कार को ऐसी पटुता की आवश्यकता होती है कि पाठक प्रभावित हो जाए ।

संवाद एकांकी का सर्वस्व है क्योंकि संवाद के द्वारा ही कथा व चरित्र के स्थल सम्मुख लाये जाते हैं । अत: संवाद एकांकीकार के शिल्प कौशल का प्रधान निकष है । स्वाभाविकता, संक्षिप्तता, वाग्विदग्धता, रोचकता, प्रभावोत्पादकता, संवाद के

उत्कर्ष विधायक गुण हैं। संवाद की भाषा का निर्माण पात्रों की जाति, गुण, कर्म, स्वभाव, मनोवृत्ति कथा की प्रकृति तथा उद्देश्य की स्थिति पर निर्भर करता है। नाट्य संकेत या रंग संकेत कथा के परिपार्श्व से संबंध रखते हैं। ये व प्रतिन्यास या सूचनाएं हैं, जिनका प्रयोग एकांकीकार कथा चरित्र, संवाद, का संयुक्त प्रभाव बढ़ाने के लिए करता है।

एकांकी में कार्य स्थान और काल की संगति या उनके संकलन निर्वाह का कोई नियम नहीं है। यह एकांकीकार की प्रवृत्ति या उनके रचना कौशल पर आधारित है कि वह कथा के विभिन्न कोणों को एक ही दृश्य में मिलाने तथा समय स्थान व कार्य की दूरियों को एक कर दे। ऐसी स्थिति में एकांकीकार को पहले ही कथा की समस्त तीव्रतम स्थितियों का संकलन सावधानी से कर लेना पड़ता है।

आंग्ल एकांकियों का उदय व उनका हिन्दी-एकांकियों पर प्रभाव :--

हिन्दी एकांकियों की यह परंपरा हमें संस्कृत व बंगला से होकर भारतेन्दु युग में तथा तब से आधुनिक काल तक एक शृंखलाबद्ध रूप में प्राप्त होती है। परन्तु नाट्य साहित्य से प्रभावित आधुनिक हिन्दी एकांकी का विकास इसी युग की देन है। पश्चिम के अनुकरण पर हमारे यहां भी नवीन शैली के एकांकियों का विकास हुआ। जिस टैकनीक के एकांकी बीसवीं शती के तीसरे दशक के पश्चात लिखे गये थे वे सर्वथा नये थे। बीसवीं शताब्दी के चौथे चरण में अंग्रेजी एकांकी नाटकों का प्रभाव स्पष्टत: हिन्दी पर परिलक्षित होने लगा। प्रसिद्ध एकांकी नाटकों ने हिन्दी लेखकों को प्रभावित किया।[1]

---

१. हिन्दी एकांकी की शिल्प विधि का विकास - डा. सिद्धनाथ कुमार - पृ. सं. १६०

कतिपय आलोचक हिन्दी एकांकी को संस्कृत से संबंधित मानते हैं तो द्वितीय पक्ष के विद्वान उसे अंग्रेजी की देन समझते हैं। उदाहरणार्थ - डा. एस. पी. खत्री का मत है, "एकांकी अंग्रेजी साहित्य की देन है - - - - कुछ आलोचक एकांकी का उद्गम संस्कृत से मानते हैं। परन्तु एकांकी जब बीसवीं शताब्दी में शुरू हुआ तो स्पष्ट है कि उस पर अंग्रेजी का प्रभाव है न कि संस्कृत का।"[1]

डा. नगेन्द्र का मत है कि, "हिन्दी में एकांकी पश्चिम से आया, इस बात को सुनकर पुराने आचार्य नये आलोचकों की पश्चिम पूजा पर खीझ उठे हैं ----- यह सब देखते हुए तो यहीं सत्य की रक्षा के लिए थोड़ी देर अपने देश प्रेम को दबाकर स्वीकार करना पड़ेगा कि हिन्दी एकांकी हमारी जवानी की तरह पश्चिम से आया।"[2]

डा. रामचरण महेन्द्र ने अंकित किया है कि "आधुनिक युग में अंग्रेजी भाषा के अध्ययन तथा अंग्रेजी एकांकीकारों के अनुकरण पर नई शैली के हिन्दी नाटकों का विकास आरम्भ हुआ। यदि पाश्चात्य एकांकी साहित्य का अध्ययन तथा हिन्दी एकांकी साहित्य में उसी टैक्नीक -- उसी गति से चलता रहा तो निश्चित ही हिन्दी एकांकी विश्व-साहित्य में अपना स्थान बना लेगा।"[3]

उपरोक्त मतों के आधार पर यह सिद्ध होता है कि भारतीय हिन्दी एकांकी साहित्य स्वयं अपनी मौलिकता रखते हुए बहुत कुछ अंग्रेजी साहित्य की विधा से प्रभावित है। हिन्दी में पाश्चात्य जगत में जिस एकांकीकार का सीधा व गम्भीर प्रभाव पड़ा है, वह बर्नार्ड शा है।[4] यूं तो बर्नार्ड शा की भांति इब्सन व मैटरलिंक के प्रभाव को भी अस्वीकृत नहीं किया जा सकता क्योंकि आधुनिक हिन्दी एकांकियों के अग्रदूत डा. रामकुमार वर्मा ने एकांकी साहित्य पर बर्नार्ड शा, मैटरलिंक व इब्सन के प्रभाव को स्वीकृत किया है।

---

१ नाटक की परख - डा. एस. पी. खत्री - पृ. सं. १७७
२. आधुनिक हिन्दी नाटक - डा. नगेन्द्र - पृ. सं. १२५-१२६
३. [illegible] - डा. रामचरण महेन्द्र - पृ. सं. [illegible]

परन्तु सबसे अधिक भुवनेश्वरप्रसाद ही पाश्चात्य जगत से प्रभावित हुए हैं । नाटकों में प्राप्य अन्तर्द्वन्द्व व्यक्ति वैचित्र्यवाद, कौतूहल, संघर्ष तथा बौद्धिक आग्रह आदि इसके प्रमाण हैं । इनमें संस्कृत की प्रस्तावना, भरत वाक्य, वस्तु विकास प्रणाली और नियम बद्धता का अभाव पाया जाता है । [२]

इब्सन, पिनरो शॉ इत्यादि में पुरानी पद्धति, कृत्रिम भावुकता, जीवन का अतिरंजित स्वरूप, स्वगत काव्य का प्रयोग, दृश्यों की अधिकता, एक संकलनत्रय की अवहेलना तथा अन्य अस्वाभाविकता के प्रति जो भी यथार्थवादी क्रान्ति थी, अब हिन्दी एकांकी में दृष्टिगोचर होने लगी है । नवीन हिंदी एकांकी निर्माण में इब्सन शॉ, गाल्सवर्दी जेम्स बैरी, जे.एम. सिंज, आरनाल्ड बैनेट इत्यादि पाश्चात्य नाटककारों का प्रत्यक्ष प्रभाव परिलक्षित होता है ।

आधुनिक अंग्रेजी एकांकी का प्रभाव भी बहुत पुराना नहीं है । जिस प्रकार संस्कृत में एकांकियों की प्राचीन परम्परा मिलती है उसी प्रकार अंग्रेजी में भी बहुत प्राचीन काल से मिरेकल व मिस्टरीज नाम से खेल, आधुनिक एकांकी का ही प्राचीन रूप होते थे ये यद्यपि बहुत बड़े होते थे, व अपने यहां के स्वांगों की भांति इंग्लैण्ड के गांव-गांव में दिखाये जाते थे परन्तु उनको आधुनिक अंग्रेजी एकांकी का बीज नहीं कहा जा सकता है ।

इंग्लैण्ड में एकांकियों के जन्म की विचित्र कहानी है । यह घटना सन् १९०३ अक्टूबर की है, जब डब्ल्यू डब्ल्यू जेकब्स की छोटी कहानी (मंकीज़ पा, बंदर का पंजा) को लुई पार्कर ने पटोत्तोलक के रूप में प्रस्तुत किया तथा वह इतना लोक प्रिय हुआ कि आम जनता ने उस दिन प्रधान नाटक देखने के लिए ठहरना उचित न समझा ।

---

१. हिन्दी एकांकी -- डा सत्येन्द्र - पृ.सं. २०१

२. हिन्दी एकांकी -- ,, ,, २०१

३. हिन्दी नाटकों का विकासात्मक अध्ययन - पृ. सं. २०४

डा. शान्तिगोपाल पुरोहित

* बन्दर का पंजा की लोक प्रियता से आशंकित हो कि बड़े नाटकों का प्रभाव कम न हो जाय, व्यवसायिक रंगमंचों ने इसे अपने यहां से बहिष्कृत कर दिया । अब यह नवजात नाट्य रूप अव्यवसायिक रंगमंचों की सम्पत्ति बन गया । अभी भी वहां नवीन प्रतिष्ठित नाटकों का प्रदर्शन इन रंगमंचों द्वारा ही होता है । तत्कालीन युग में नाटक की इस नवीन विधा की ओर बड़े बड़े लेखकों का ध्यान गया और उन्होंने अनेक सुन्दर एकांकी नाटकों की रचना की ।

बीसवीं शताब्दी के चौथे चरण में अंग्रेजी के एकांकी नाटकों का प्रभाव स्पष्ट हिन्दी पर परिलक्षित होने लगा ।[1] अंग्रेजी के पूरे नाटकों के प्रभाव स्वरूप हिन्दी के सुखान्त प्रहसनों में व्यंग्य का समावेश किया गया साथ ही दुखान्त नाटकों का भी प्रादुर्भाव हुआ, जिसका उदाहरण अमरसिंह है ।

अंग्रेजी नाटकों व एकांकियों के प्रभाव से ही हिन्दी एकांकी में यथार्थवादी प्रवृत्ति अन्ध विश्वास, धार्मिक ढोंग सामाजिक कुरीतियों आदि पर व्यंग्य प्रहार किये गये । देवकीनन्दन त्रिपाठी कृत जयनारसिंह एवं राधाकृष्णदास कृत दुःख की बाला में इन तत्वों का दिग्दर्शन होता है । अंग्रेजी नाटकों एवं एकांकियों के प्रभाव स्वरूप हिंदी नाटककार संस्कृत नाट्य विधाओं से दूर हटने लगे ।

हिन्दी लेखक के सजग मानस पर पाश्चात्य साहित्यिक विधाओं व प्रेरणाओं का प्रभाव पड़ रहा था । एकांकी संबंधी चेतना धीरे धीरे प्रबल हो रहा था । अंग्रेजी के सम्पर्क व पाश्चात्य नाट्यशास्त्र के नियमों का अनुकरण करने से हिन्दी एकांकी की टेक-नीक में भारी परिवर्तन हुआ ।[2] पाश्चात्य देशों में बढ़ती व्यस्तता जीवन की तीव्रता तथा अवकाश की न्यूनता के कारण उन्होंने समाज को आलोचनात्मक नेत्रों से देखा, तथा उनकी तथ्यों का अनुसरण भारत में हुआ । फिर एकांकी पढ़ने तथा अभिनय दोनों की

---

१. हिन्दी एकांकी की शिल्प विधि का विकास - पृ. सं. ११० - डा. सिद्धनाथकुमार
२. हिन्दी एकांकी उद्भव और विकास - डा. रामचरण महेन्द्र - पृ. सं. १३३

दृष्टियों से समाज का मनोरंजन करने तथा समस्याओं को उभारने में सफल हुआ ।

पाश्चात्य एकांकी कला से प्रभावित प्रथम प्रयास आलोच्य एकांकी व नाटककार की रचनाओं में मुखरित हुआ । आपका नवीन विधा से प्रभावित एकांकी बादल की मृत्यु सन् १९३० में प्रकाशित हुआ । कला की दृष्टि से यद्यपि यह सफल एकांकी न था परन्तु प्रयोग की दृष्टि से इसका हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है । सम्भवतः बादल तथा वायु का मानवीकरण मैटरलिंक से प्रभावित होना सिद्ध करता है ।

पाश्चात्य शैली का अनुसरण करने वाले जो अन्य एकांकीकार इस ओर अग्रसर हुए उनमें सर्वश्री लक्ष्मीनारायण मिश्र, भुवनेश्वरप्रसाद, उपेन्द्रनाथ अश्क, उदयशंकर भट्ट तथा सेठ गोविन्ददास हैं । नवीन एकांकी कला के विकास व प्रयोग में इन एकांकीकारों का महत्वपूर्ण स्थान है ।

प्रसाद की शेक्सपियर का अनुकरण करने की प्रवृत्ति भावावेश तथा असंभावनाओं के विरुद्ध क्रान्ति का पथ श्री लक्ष्मीनारायण मिश्र ने रखा । मिश्र जी ने मौलिक रूप से समस्या एकांकी का विकास किया । योरोप के एकांकियों में जिस यथार्थ तथा मनोवैज्ञानिक चित्रण का काल इब्सन से आरम्भ होता है, यूनानी व शेक्सपियर की शैली के अतिरंजित नाटकों के विरुद्ध जब प्रतिक्रिया की लहर चलती है, मनोविज्ञान को आधार बनाया जाता है और इस युग के सभी नाटककार शॉ आदि की उपज हैं, उस यथार्थ को मिश्र जी ने संस्कृत नाटकों से ग्रहण किया है । यह उनकी कला तथा प्रतिभा की मौलिकता का प्रभाव है कि उनके नाटक पाश्चात्य यथार्थवाद के इतने निकट आ गये हैं ।

पाश्चात्य प्रभाव स्पष्ट है कि भुवनेश्वर प्रसाद के एकांकियों पर जीवन में आकस्मिकता को महत्व देते हैं तथा स्थान-स्थान पर नाटकीय प्रयोग करते हैं । आपकी शैली तथा कथा-वस्तु पर पाश्चात्य जीवन दर्शन और एकांकियों में शॉ का विशेष प्रभाव है । शॉ की व्यंग्य वक्रोक्तियों ने इन्हें विशेष रूप से आकर्षित किया है ।

इसी प्रकार उपेन्द्रनाथ अश्क की रचनाओं पर जे.ए.फर्गुसन के कैम्पबेल्स आफ किम्पूर तथा लार्ड डनसनी के " नाइट एट अन इन की टैकनीक का प्रभाव प्रतीत होता है। पाश्चात्य एकांकी के प्रकाश में हिन्दी एकांकी साहित्य को नवीन दिशा व प्रेरणा मिली। तात्पर्य यह है कि आधुनिक एकांकी अपनी कला में पूर्ण व स्वकेन्द्रित है, परन्तु नवीन एकांकी को नवीन मार्ग पर प्रशस्त करने में पाश्चात्य एकांकियों का महत्वपूर्ण योगदान है।